Con. 3. XI.4.49
320

अंक 11
संख्या 4

बृहस्पतिवार
17 नवम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा–(जारी) 3703-3746
[तृतीय पठन]

भारतीय संविधान सभा

बृहस्पतिवार, 17 नवम्बर, सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः दस बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा-(जारी)

(तृतीय पठन)

***अध्यक्षः** अब हम संविधान के तृतीय पठन को आरम्भ करेंगे। डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** (बंबईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"संविधान को सभा ने जिस रूप में निश्चित किया है उस रूप में पारित किया जाये।" *(हर्षध्वनि)*

***श्री महावीर त्यागीः** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): बधाई।

****श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): डॉ. अम्बेडकर को कृपा कर के बोलने दीजिये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं अन्त में बोलूंगा। साधारणतः इस समय नहीं बोला जाता।

***माननीय श्री एन.वी. गाडगिल** (बंबईः जनरल): अब इस प्रस्ताव पर मत लिया जाये। *(हास्य)*

***श्री महावीर त्यागीः** इस संविधान के सम्बन्ध में जिसे हम पारित करने जा रहे हैं, डॉ. अम्बेडकर की क्या राय है?

***अध्यक्षः** मेरे विचार से अब हम कार्य आरम्भ करें। डॉ. अम्बेडकर ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया है कि संविधान को सभा ने जिस रूप में निश्चित किया है उस रूप में पारित किया जाये। अब इस प्रस्ताव पर बहस हो सकती है। कल हम इस सम्बन्ध में विचार कर रहे थे कि तृतीय पठन में कितना समय लगेगा और मैंने सदस्यों से प्रार्थना की थी जो लोग बोलना चाहें वे अपने नाम मेरे पास भेज दें। कल शाम तक 71 लोगों ने अपने नाम मेरे पास भेजे थे। आज प्रातः

[अध्यक्ष]

कुछ और नाम भी मिले हैं। मुझे यह दिखाई देता है कि यदि हममें से प्रत्येक व्यक्ति बीस मिनट लेगा और यदि हम इस सप्ताह में तीन दिन और अगले सप्ताह में पांच दिन बैठें तो हमें चौबीस घंटे मिलेंगे और इस समय में बहत्तर वक्ता बोल सकेंगे। जिन लोगों ने बोलने की इच्छा प्रकट की है उन्हें इस समय में बोलने का अवसर मिल जायेगा और अधिक बैठने की आवश्यकता नहीं होगी।

***श्री एच.वी. कामतः** हम चार घंटे क्यों न बैठें।

***अध्यक्षः** इस स्थिति में हमें चार घंटे बैठने आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

***श्री एच.वी. कामतः** यदि हम प्रति दिन चार घंटे बैठेंगे तो हम इस सत्र को शुक्रवार के बजाय बृहस्पतिवार ही को समाप्त कर देंगे। यदि हम इससे भी पहले समाप्त कर सके तो हमें विधान मंडल के सत्र के पूर्व अधिक समय मिल जायेगा।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): सम्भव है कि कुछ माननीय सदस्य बाद में आयें और उस समय अपने नाम दें।

***अध्यक्षः** वे आयें। हमें कुछ और कार्य भी करना है। कम से कम आज और कल, अथवा इस सप्ताह के अन्त तक, हम तीन घंटे ही बैठें। यदि हम इसकी आवश्यकता देखें, अथवा यह देखें कि अधिक कार्य नहीं हुआ है, तो अगले सप्ताह के सत्र में हम कमी पूरी कर सकते हैं।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रासः जनरल): क्या सभा दस बजे से एक बजे तक समवेत रहेगी?

***अध्यक्षः** जी हां।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारतीः** हमें यह पूर्णतया माननीय है।

***अध्यक्षः** मेरी समझ में नहीं आता कि मैं सदस्यों को किस क्रम से बुलाऊं। मेरे विचार से मुझे पहले की ही प्रथा का अनुसरण करना चाहिये। यदि सदस्य अपने स्थानों पर खड़े होंगे तो मैं उनमें से किसी एक को बुला लूंगा।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): वे अंग्रेज़ी अक्षरों के क्रम से बुलाये जायें।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से यह एक निष्प्राण रीति होगी। मैं पहले की प्रक्रिया का ही अनुसरण करूंगा और मुझे आशा है कि मुझे किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ेगा। श्री मुनिस्वामी पिल्ले।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने जिस प्रस्ताव को उपस्थित किया है उसका समर्थन करने के लिए मैं इस आदरणीय सभा के सामने आया हूं। श्रीमान, हमारे महान देश के संविधान के निर्माता की इस सभा की कार्यवाही का जिस उदारता से आपने संचालन किया है यदि उसकी मैं चर्चा नहीं करूंगा तो मैं अपने कर्तव्य का पालन

नहीं करूंगा। श्रीमान, पूना के युगप्रवर्तक समझौते पर आपने भी हस्ताक्षर किये थे इसलिये आज आपको यह देख कर हर्ष होगा कि भारतीयों की सभी जातियों तथा वर्गों को समान अवसर प्रदान करके हम भारतीय इतिहास के एक नवीन अध्याय का आरम्भ कर रहे हैं। श्रीमान दलित वर्गों के उत्थान का बीज महात्मा गांधी ने बोया था जो आगे चल कर इतना वृहदाकार हो गया कि आज हमें ऐसे लोगों का संग प्राप्त है जिनका यह विचार है कि हमारे महान देश में जनसाधारण को सुविधायें प्रदान करना बहुत आवश्यक है।

श्रीमान, मसौदा समिति ने जो बहुमूल्य तथा महान सेवा की है उसकी मैं प्रशंसा करता हूं। उसके सदस्य रात-दिन अथक परिश्रम करते रहे हैं जिसके फलस्वरूप ही महत्वपूर्ण अनुच्छेदों के सम्बन्ध में निर्णय हो सका है। मसौदा समिति के सभापति डॉ. अम्बेडकर ने जिस बुद्धिमत्ता तथा कार्यक्षमता का परिचय दिया है उसकी भी मैं प्रशंसा करता हूं। *(तुमूल हर्षध्वनि)*। मैं भी उसी जाति का हूं जिसने डॉ. अम्बेडकर को जन्म दिया है और मुझे इसका गर्व है कि उनकी कार्य पटुता को न केवल हरिजनों ने बल्कि भारत की सभी जातियों के लोगों ने स्वीकार किया है। अनुसूचित जातियों ने महान भक्त नन्दनार, महान वैष्णव सन्त निरुपाजानालवार और महान दार्शनिक निरुबलुवार को जन्म दिया है जो इस देश के कोने-कोने ही में नहीं बल्कि सारे संसार में विख्यात हैं।

इन महान हरिजनों की नामावलि में अब हमें डॉ. अम्बेडकर का नाम भी जोड़ना है, जिन्होंने संसार को दिखा दिया है कि अनुसूचित जातियों का किसी से कम महत्व नहीं है और वे संसार में किसी भी महान कार्य को तथा महान सेवा को कर सकते हैं। श्रीमान, मैं जानता हूं कि 26 जनवरी 1950 से जो संविधान प्रवर्त्तन में आयेगा उसका निर्माण करके उन्होंने केवल हरिजन समुदाय की ही नहीं बल्कि सारे भारत की सेवा की है। श्रीमान साथ ही मेरी यह धारणा भी है कि मुख्य मसौदाकार तथा उनके कर्मचारियों ने संविधान निर्माण के सम्बन्ध में जो कार्य किया है उसका महत्व कम नहीं है। वे भी प्रशंसा के पात्र हैं।

श्रीमान, जहां तक संविधान का सम्बन्ध है, मुझे इसका गर्व है कि हमारे देशवासियों ने इस आवश्यकता का अनुभव किया है कि जो लोग समाज में निम्न स्तर के समझे जाते हैं उनके प्रति विभेद न बरता जाये और उसका उल्लेख मूलाधिकारों में किया गया है। अनुच्छेद 15 और 16 में विभेद का प्रतिषेध है और साथ ही नौकरी के सम्बन्ध में अवसर-समता की व्यवस्था है। मैं इन उपबन्धों का विशेष रूप से स्वागत करता हूं।

इस संविधान द्वारा इस देश का ही नहीं बल्कि सारे संसार का ध्यान एक बड़ी बात की ओर आकर्षित किया गया है और वह यह है कि अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया गया है। अस्पृश्यता भारत के समाज पर एक कलंक थी। बड़े-बड़े अवतारों तथा सन्तों ने अस्पृश्यता का अन्त करने के लिये अपनी पूरी शक्ति लगाई किन्तु इस नवीन संविधान द्वारा इस आदरणीय सभा को ही यह घोषित करना था कि हमारे देश में अब अस्पृश्यता का लेशमात्र भी नहीं रहेगा।

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 29 द्वारा भावी सरकारों को हिन्दुओं की सभी धार्मिक संस्थाओं को हिन्दुओं के सभी वर्गों के लिये खोल देने की शक्ति प्रदान की गई। कभी यह होता था कि मंदिरों की पवित्र चाहर दीवारी के अन्दर कुत्ते और सुवर भले ही चले जायें किन्तु किसी अछूत की छाया पड़ने से भी वह अपवित्र हो जाती थी। श्रीमान, मुझे इसका गर्व है कि इस अनुच्छेद द्वारा यह कलंक मिटा दिया गया है। हिन्दुओं के एक वर्ग के प्रति विभेद बरते जाने के कारण और उसे प्रवेश न मिलने के कारण उसके लोगों ने विभिन्न धर्मों को अंगीकार कर लिया। इससे हमारी जनसंख्या भी कम हो गई और हमारे समाज में सुयोग्य व्यक्ति भी कम हो गये। आज मुझे इसका गर्व है कि अनुच्छेद 29 के अधीन केवल यही नहीं होगा कि हिन्दुओं की धार्मिक संस्थायें हिन्दुओं के सभी वर्गों के लोगों के लिये खोल दी जायेंगी किन्तु वे शिक्षा-संस्थायें भी, जिनका पोषण राज्य करता है अथवा जो सरकार से सहायता पाती हैं, लोगों के सभी वर्गों के लिये खोल दी जायेंगी।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, महात्मा गांधी ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि सर्वत्र नशाबन्दी होनी चाहिये। मैं यह घोषित करता हूं कि यदि एक दिन के लिये भी उन्हें पूर्ण शासनाधिकार मिलता तो वे सारे भारत में नशाबन्दी कर देते। संविधान के अनुच्छेद 47 में यह ठीक ही कहा गया है कि भारत में सर्वत्र नशाबन्दी की जायेगी। अनुच्छेद 46 द्वारा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों को एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है और मैं उसका स्वागत करता हूं। अनुच्छेद 48 दुधारू गायों के परिरक्षण तथा गोवध के प्रतिषेध के सम्बन्ध में है। भारत में गाय को बहुत महत्व दिया जाता है और लोगों की यह धार्मिक भावना है कि गाय का परिरक्षण होना चाहिये। एक हिन्दू होने के नाते मुझे इसका हर्ष है कि संविधान में इस सम्बन्ध में एक अनुच्छेद रखा गया है। अनुच्छेद 343 में हम सारे भारत के लिये एक ही सरकारी भाषा के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने के लिये सहमत हो गये हैं। यह कहा गया है कि 15 वर्ष की अवधि में सारे भारत को एक ही भाषा अंगीकार कर लेनी चाहिये। मैं एक ऐसे प्रदेश का निवासी हूं जो हिन्दी भाषी नहीं है और मेरी जाति के लोगों को हिन्दी भाषा सीखने का अवसर नहीं मिला है। चाहे जो भी हो भावी सरकार इस विषय पर विचार करेगी और यदि वह यह देखेगी कि अहिन्दी प्रदेशों में लोगों का एक बड़ा वर्ग हिन्दी को अभी पूर्णतया नहीं अपना पाया है तो वह उसे कुछ अधिक समय दे देगी।

अनुच्छेद 74 के सम्बन्ध में, जो मंत्रियों को चुनने के बारे में है, श्रीमान, मेरा निवेदन है कि मैं समुदाय के अधिकारों में विश्वास रखता हूं। पिछले वर्षों में, जब 1935 का अधिनियम प्रवर्त्तन में था एक प्रथा इस प्रकार की थी कि जिन समुदायों का प्रतिनिधित्व नहीं होता था उनके कुछ लोग मंत्री बना दिये जाते थे। इसमें इसका उल्लेख नहीं किया गया है किन्तु मुझे विश्वास है कि जिन लोगों के हाथ में भविष्य में शासन की बागडोर होगी वे मंत्रिमंडलों में उन समुदायों के लोगों को रखने का प्रयास करेंगे जिनका प्रतिनिधित्व नहीं हुआ हो ताकि वे समुदाय पिछड़े हुए न रहें और समाज में वही स्थान प्राप्त कर सकें जो अन्य लोगों को प्राप्त हो। अनुच्छेद 81 के सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है कि लोक-सभा में स्थान

रक्षित नहीं किये गये हैं। जब इस आदरणीय सभा में मैंने इस पर आपत्ति की थी तो उस समय मसौदा समिति के सभापति ने कहा था कि अल्पसंख्यक मंत्रणा समिति ने इस सम्बन्ध में कोई विशेष सिफारिश नहीं की है किन्तु मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति जो अन्तर्कालीन संसद की रचना के लिये उत्तरदायी होंगे, उन लोगों के लिये किसी न किसी प्रकार कुछ स्थान रक्षित कर देंगे।

श्रीमान, मुझे इस का गर्व है कि मसौदा समिति ने अनुसूचित जातियों के सदस्यों का तथा अन्य लोगों का दृष्टिकोण समझा है और सेवाओं में अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में अनुच्छेद 320 तथा 335 को उपस्थित किया है। मैं इसे बहुत महत्व देता हूं कि एक ऐसे समुदाय को जिसे शताब्दियों से समाज ने बहिष्कृत कर रखा था, आज एक स्थान दिया जा रहा है। मेरे विचार से सेवाओं में प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में इन अनुच्छेदों से अनुसूचित जातियों के हितों की बहुत कुछ रक्षा हो सकेगी।

संविधान के मसौदे की एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत के लोगों को वयस्क मताधिकार प्रदान किया जा रहा है। इसके फलस्वरूप इस देश के सभी वयस्कों को विशेषत: अनुसूचित जातियों के लोगों को जो भारत के जन-समुदाय के षष्ठांश हैं, विभिन्न विधान-सभाओं में अपने यथेष्ट प्रतिनिधि भेजने के लिये समान अवसर मिल जायेगा। मुझे केवल यह सन्देह है कि क्या ये लोग, जिन्हें अभी यथोचित शिक्षा नहीं मिली है, अपने मत समझदारी से देकर सुयोग्य प्रतिनिधियों को भेज सकेंगे या नहीं। किन्तु मुझे विश्वास है कि भारत में विभिन्न समुदायों की सहायता से वे विभिन्न विधान-सभाओं में यथेष्ट प्रतिनिधि भेज सकेंगे।

श्रीमान, प्रान्तीय विधान-सभाओं में अनुसूचित जातियों के लिये स्थान रक्षित रखने के सम्बन्ध में दस वर्ष की कालावधि रखना आवश्यक था किन्तु मंत्रणा-समिति के समक्ष मैंने यह तर्क उपस्थित किया था कि कोई कालावधि नहीं रखनी चाहिये क्योंकि संकटापन्न स्थिति तथा महात्मा गांधी के निधन के कारण देश किसी भी वर्ग के लिये स्थान रक्षित करने के पक्ष में नहीं है। इसे ध्यान में रखा गया किन्तु सरदार पटेल की उदारता के कारण, जिन्होंने अल्पसंख्यक मंत्रणा समिति की बैठकों को बड़ी योग्यता के साथ संचालन किया, हमने दस वर्ष की कालावधि रखी और एक विशेष पदाधिकारी की नियुक्ति के लिये व्यवस्था की, जो हरिजनों तथा अनुसूचित जातियों के लोगों की आवश्यकताओं को पूरी करने का प्रबन्ध करेगा। यदि इस काल में हमारी यथेष्ट उन्नति हो गई तो हम कालावधि को हटा देंगे। किन्तु यदि यह देखा गया कि ये लोग इस समय में अन्य समुदायों के स्तर पर नहीं आये हैं तो मुझे विश्वास है कि भावी संसद-सदस्य तथा सरकार इस कालावधि को बढ़ा देंगे।

श्रीमान, एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों की परिभाषा की गई है। यह कहा जाता है कि प्रान्तीय विधान-मंडलों के अस्तित्व में आने के पूर्व राष्ट्रपति इस सम्बन्ध में एक घोषणा निकालेंगे कि कौन से समुदाय अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के अन्तर्गत आते हैं। मुझे तथा मेरी जाति के अन्य लोगों को यह ज्ञात हुआ है कि कुछ लोग अनुसूचित

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

जातियों के अन्तर्गत आने वाली कुछ जातियों को उस वर्ग से हटाने के लिये चाल चल रहे हैं। श्रीमान, मुझे आशा है कि जो जातियां वास्तव में अनुसूचित जातियों के वर्ग में हैं उनमें से किसी को भी उस वर्ग से नहीं हटाया जायेगा।

सभा के विचाराधीन इस संविधान की सबसे बड़ी बात यह है कि इस से "अल्पसंख्यक" शब्द निकाल दिया गया है। वास्तव में मेरी जाति के लोगों की यह इच्छा कदापि नहीं है कि वे सदा अल्पसंख्यक अथवा अनुसूचित जाति के लोग कहे जायें। हम इस देश के तीस करोड़ लोगों में समाविष्ट हो जाना चाहते हैं। महात्मा गांधी ने यह ठीक ही कहा था कि आवश्यकता है हृदय परिवर्तन की। यदि सवर्ण हिन्दू, अथवा वे लोग जिनका इस देश में बाहुल्य है, हृदय परिवर्तन का परिचय दें, तो श्रीमान, हम स्वतः भारतीयों के वृहत् समुदाय में समाविष्ट हो जायेंगे। मैं नहीं चाहता कि हमेशा के लिये एक पृथक वर्ग के लोग बने रहें।

अन्त में मैं इस सभा में उपस्थित हरिजन सदस्यों की ओर से, तथा देश के अन्य हरिजनों की ओर से, आप को तथा इस आदरणीय सभा को और सरकार को आश्वासन देता हूं कि इन हरिजन.....

***श्री के. हनुमन्थय्या** (मैसूर राज्य): क्या हम हरिजनों का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** हम विशेष रूप से हरिजन समुदाय के लोग कहे जाते हैं। हरिजनों की ओर से मैं आपको तथा भावी भारत सरकार को आश्वासन देता हूं कि हरिजनों का एक एक आदमी संविधान-सभा द्वारा पारित संविधान का समर्थन करेगा और उसकी भावना को तथा उसके प्रत्येक अक्षर को प्रवर्त्तन में लाने के लिये प्रयत्न करेगा।

श्रीमान, मैं आपको धन्यवाद देता हूं।

***सेठ गोविन्द दास** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): सभापति जी, आज मुझे अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि हमने जिस विधान को लगभग तीन वर्षों में पूरा किया, उसका अब अन्तिम पारायण होना आरम्भ हुआ है। इस अवसर पर सर्वप्रथम मैं डॉ. अम्बेडकर साहब को बधाई देता हूं कि उन्होंने इस विधान की तैयारी में इतना परिश्रम किया और आज उन्होंने यह प्रस्ताव भी हमारे सामने उपस्थित किया कि यह विधान, जो भी हमने उस में संशोधन किये हैं उन सबके साथ, स्वीकृत किया जाये। डॉक्टर अम्बेडकर साहब को वर्तमान काल का मनु कहा जाता है। जो कुछ हो, मेरा यह मत है कि उन्हें जो विधान सम्बन्धी यह कार्य दिया गया उसके वे सर्वथा योग्य थे।

हमारी बधाई के दूसरे पात्र हमारे प्रधान मंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू हैं, जिन्होंने इस विधान परिषद् में सर्वप्रथम उस प्रस्ताव को उपस्थित किया जो इस विधान की आधार शिला कहा जा सकता है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** मैं जानना चाहता हूं कि क्या माननीय सदस्य महोदय हिन्दू कोड की चर्चा करते हुए डॉ. अम्बेडकर को मनु कहा है?

***सेठ गोविन्द दास:** जी नहीं। हिन्दू कोड से मेरे कथन का कोई सम्बन्ध नहीं था। आप जानते हैं कि मैं हिन्दू कोड के बहुत से अंशों के विरुद्ध हूं तो मैं उस प्रस्ताव को स्मरण दिला रहा था जो पंडित जवाहर लाल जी ने इस परिषद् में आरम्भ में रखा था और जैसा मैंने कहा था वह प्रस्ताव हमारे इस विधान की आधारभूत शिला है।

हमारे तीसरे बधाई के पात्र सरदार वल्लभभाई पटेल हैं, जिन्होंने हमारी विविध रियासतों को, जिनके कारण हमारा देश भिन्न-भिन्न टुकड़ों में बंटा हुआ था, एकीकरण किया।

इस प्रकार आज इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए मैं इन तीनों महानुभावों को बधाई देता हूं।

हमारा देश संसार के 6 प्राचीनतम देशों में एक है। वे प्राचीनतम देश हैं भारत, चीन, यूनान, बेबीलोनिया और मैसोपोटामिया। जहां तक बेबीलोनिया और मैसोपोटामिया का सम्बन्ध है, आज संसार में उनका कोई विशिष्ट स्थान नहीं है। यूनान को यदि हम देखें तो हमें ज्ञात होता है कि आज प्राचीन यूनान केवल उसके खंडहरों में दृष्टिगोचर होता है। प्राचीन यूनान की संस्कृति और सभ्यता हमें वर्तमान यूनान में दिखाई नहीं देती। यहां पर ईसाई संस्कृति और सभ्यता का दौर-दौरा है। जहां तक कि मिश्र का सम्बन्ध है, मिश्र में भी हमें मिश्र की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता केवल वहां के पिरामिडों में दृष्टिगोचर होती है। मिश्र में यदि आज कोई जाये तो उसे मिश्र की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के दर्शन नहीं होते। वहां पर आज इस्लामी संस्कृति और सभ्यता का दौर-दौरा है। जहां तक चीन का सम्बन्ध है, चीन में हमें बौद्ध काल के भारत और उसके पश्चात् वहां पर जो कुछ हुआ उसकी संस्कृति और सभ्यता का थोड़ा बहुत दर्शन अवश्य होता है, परन्तु चीन में भी हमें अधिकांश में आधुनिकता का ही दौर-दौरा दिखाई देता है। इस प्रकार इन 6 प्राचीनतम देशों में से पांच देशों में हमें उनकी प्राचीन संस्कृति दृष्टिगोचर नहीं होती। केवल भारत ही संसार के प्राचीनतम 6 देशों में से एक ऐसा देश है जिसमें आज भी हमें उस की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता की परम्परा हर क्षेत्र में दिखाई देती है।

यदि कोई यह आशा करे कि भारत प्राचीन ऋग्वेद के काल का भारत रह सकता है तो यह आशा कभी पूरी नहीं हो सकती और न यह उचित ही है। हम इस समय के भारत को प्राचीन ऋग्वेद काल का भारत नहीं बनाना चाहते। परन्तु इसी के साथ साथ हम एक बात यह भी चाहते हैं कि जो संस्कृति और सभ्यता हमें सहस्रों वर्षों से प्राप्त हुई है जिसकी परम्परा आज भी हमारे देश में दृष्टिगोचर होती है और जिस परम्परा को हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इस शताब्दी में भी हमारे यहां पर स्थित रखने के लिये नाना प्रकार के प्रयत्न किये, उस प्राचीन संस्कृति और सभ्यता को हम सर्वथा विस्मृत न कर दें। आधुनिक जगत में जिन वस्तुओं की हमें आवश्यकता है, आधुनिक काल में विज्ञान में जो जो आविष्कार किये हैं, उन सबको हमें ग्रहण करना चाहिये। यूरोप या अमरीका में जो जो नई बातें हुई हैं उनसे भी हमें घृणा करने की आवश्यकता नहीं है। उन नई बातों में हमारे देश

[सेठ गोविन्द दास]

के लिये जितनी उपयोगी बातें हों सबको हमें ग्रहण करना चाहिये। आधुनिक भारत ऐसा भारत होना चाहिये जिसमें हमें प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के भी दर्शन हों और आधुनिक काल की जो आवश्यकतायें हैं उनका भी समावेश हो। इस दृष्टि से यदि हम अपने विधान को देखें तो इसमें हमें कई न्यूनतायें दृष्टिगोचर होती हैं। कई लोग तो यह भी समझते हैं कि वर्तमान विधान 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट का ही एक वृहद रूप है। चाहे हमको उस दृष्टि से इस विधान में कुछ कमियां दृष्टिगोचर हों पर मैं इसको मानने के लिये तैयार नहीं हूं कि वर्तमान विधान 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट का ही एक वृहद रूप है। इस बात की आवश्यकता थी कि गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट की कुछ धारायें इसमें रखी जायें। अन्य देशों के जो विधान हैं, आयरलैंड का, कनाडा का, अमरीका का, इन विधानों की भी कई धारायें हमें विधान में दृष्टिगोचर होती हैं। फिर इस विधान में कोई भी मौलिकता न हो, यह बात भी नहीं, मौलिकता भी इस विधान में पर्याप्त है। हां, इस बात को मानने के लिये मैं तैयार हूं कि यह विधान पूर्ण रूप से संतोषप्रद नहीं है। कुछ लोगों का मत है कि यह विधान इतना बड़ा हो गया, इस विधान में इतनी अधिक धारायें हैं और इसमें इतनी बातें कहीं गई हैं कि जिनकी आवश्यकता नहीं थी पर मेरा इससे मतभेद है। यदि विधान लम्बा भी हो गया और इस में ब्यौरों की भी कुछ बातें कहीं गई तो इससे हमें असंतोष नहीं होना चाहिये। वरन इन ब्यौरे की बातों के कारण हमारी पार्लियामेंट को इस विधान के द्वारा अनेक निर्देश मिलेंगे। इसलिये इस विधान के बड़े हो जाने के कारण, इस विधान में इतनी अधिक धारायें आ जाने के कारण, इस विधान में ब्योरे की बातें कही जाने के कारण, हमें उलटा संतोष होना चाहिये। मुझे एक ही बात खटकती है और वह बात सदा खटकती रहेगी, कि इस प्राचीनतम देश का यह विधान देश के स्वतंत्र होने के पश्चात् विदेशी भाषा में बना है। मैं सदा आपके सामने इस प्रश्न को उठाता रहा हूं और आपने भी एक बार नहीं अनेकों बार इस बात का विश्वास दिलाया था कि आपकी यह इच्छा है कि हमारा विधान हमारी राष्ट्रीय भाषा में हो। मेरा यह मत है कि यदि हम प्रयत्न करते तो हम अवश्य इस काम में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकते थे। तीन वर्ष तक हम लोग अंग्रेजी विधान को पास करने के लिये यहां बैठे। इस विधान को यदि हम एक मास और बैठकर हिन्दी में पास करते तो यह बात न असम्भव थी और न कष्टसाध्य है। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि हमारी गुलामी की समाप्ति के पश्चात् हमारे स्वतन्त्र होने के पश्चात् विधान जो हमने एक विदेशी भाषा में पास किया है, हमारे लिये सदा कलंक की वस्तु रहेगी। यह गुलामी का धब्बा है, यह गुलामी का चिन्ह है। चाहे आप इस विधान का अनुवाद 26 जनवरी तक प्रसारित कर दें तो भी मैं यह कहना चाहता हूं, स्पष्ट रूप से कहना चाहता हूं कि अनुवाद सदा अनुवाद ही रहेगा। अनुवाद मूल का स्थान नहीं ले सकता है और जब कभी कोई भी वैधानिक अड़चन हमारे सामने उपस्थित होगी, जब कोई वैधानिक प्रश्न हमारे सुप्रीम कोर्ट, हमारे हाई कोर्ट या दूसरी कचहरियों के सामने उपस्थित होगा, हमारे सामने एक विदेशी भाषा का विधान रहेगा और इसके कारण विदेशी भाषा का प्रभुत्व। यह बात हमें सदा सताती रहेगी, मैं उस समय की कल्पना करता हूं, उस समय का स्वप्न देखता हूं जिस समय हमारा देश एक और विधान परिषद् की सृष्टि करेगा और वह विधान परिषद् हमारे सामने, हमारी राष्ट्र भाषा में हमारा मूल विधान उपस्थित करेगी।

अब यदि हम विधान को देखें तो सबसे पहले, जो उसका आदि वाक्य है, जिसे अंग्रेजी में प्रिएम्बल कहते हैं, उस तरफ हमारा ध्यान जाता है। जैसा कि मैंने अभी कहा था कि पंडित जवाहर लाल नेहरू का प्रस्ताव इस विधान की आधारशिला है उसी प्रकार जो प्रिएम्बल है, यह जो आदि वाक्य है उस आदि वाक्य में विधान का सारा निचोड़ आ गया है।

इस प्रिएम्बल में हमने स्पष्ट कर दिया है कि हमारे देश में जो शासन-पद्धति रहेगी वह प्रजातंत्रात्मक रहेगी। हमारे सामने दो ही रास्ते थे। या तो हम प्रजातंत्रात्मक विधान की रचना करते या हम तानाशाही की ओर बढ़ते और इस प्रकार का विधान तैयार करते जिसका अन्तिम निचोड़ होता इस देश में तानाशाही की स्थापना। हमने इस प्रिएम्बल में, इस आदि वाक्य में स्पष्ट कर दिया है कि हमारा शासन प्रजातंत्रवादी होगा। इसके पश्चात् इस आदि वाक्य में जिन चार वस्तुओं का वर्णन है उस तरफ भी मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। पहली बात न्याय, दूसरी बात स्वतंत्रता, तीसरी बात समानता और चौथी बात भ्रातृभाव। न्याय का प्रथम स्थान रहना सर्वथा उचित है। हमारे देश में सदा न्याय को ही प्रथम स्थान प्राप्त रहा है। यदि हम अपने प्राचीन इतिहास को देखें उस इतिहास की परम्परा को देखें तो हमें ज्ञात होगा कि इस देश में न्याय का प्रथम स्थान था। हमारे यहां कहा गया है:

"स्वस्ति प्रजाभ्य: परिपालयन्तां
न्याय्येन मार्गेता महीं महीशा:।।"

अर्थात् शासक न्याय मार्ग से प्रजा का पालन करें। इस लिये प्रजातन्त्र की घोषणा के बाद इस आदि वाक्य में न्याय को स्थान देना सर्वथा उचित बात हुई है। उसके पश्चात् स्वाधीनता का स्थान है। स्वाधीनता बिना सब व्यर्थ है। हमारी स्वाधीनता चली गई थी, सब कुछ चला गया था। स्वाधीनता प्राप्त करके हमने सब कुछ प्राप्त किया है।

गोस्वामी तुलसी दास जी ने अपनी रामायण में लिखा है:

"पराधीन सपनेहु सुख नाही।"

गोस्वामी जी का यह वाक्य चाहे कितना भी प्रचलित क्यों न हो गया हो, उसका महत्व सदा रहेगा। इसलिये इस आदि वाक्य में जो दूसरा स्थान स्वाधीनता को दिया गया है वह सर्वथा उचित बात है। इसके पश्चात् तीसरा स्थान है समानता का। एक आदमी बड़ी-बड़ी अट्टालिकाओं में निवास करे अनेकों प्रकार का भोजन करे, जाड़ों में पशमीनों जैसी वस्तुओं को और गर्मियों में हवा की फूंक से उड़ने वाले कपड़े पहने और दूसरी ओर 99 को झौंपड़े भी प्राप्त न हों। कपड़े भी पूरे न मिलें, यहां तक कि उनकी स्त्रियों को अपनी लाज ढकने के लिये वस्त्र भी उपलब्ध न हों, यदि किसी देश की ऐसी परिस्थिति है तो वह देश कभी सुखी देश नहीं रह सकता। उस देश में क्रान्ति अवश्यम्भावी है। इस लिये इसमें समानता को स्थान देना सर्वथा उचित है। चौथा स्थान भ्रातृ-भाव को दिया गया है। बिना प्रेम के कौन सामाजिक रचना सुखप्रद हो सकती है? तो यह जो आदि वाक्य इस विधान में है उसके अनुसार हमारा देश शासित होगा इसकी मैं आशा करता हूं।

[सेठ गोविन्द दास]

जहां तक विधान की भिन्न-भिन्न धाराओं का सम्बन्ध है, मैं तीन ही धाराओं के सम्बन्ध में कुछ कहूंगा। एक का हमारे नाम का सम्बन्ध है। "इंडिया दैट इज़ भारत" इस विधान में देश का नाम दिया गया है। भारत नाम होना यह उचित बात हुई परन्तु जिस ढंग से देश का नाम भारत रखा गया है उससे हमें पूरा संतोष नहीं हो सका। "इंडिया दैट इज भारत" एक विलक्षण नाम है। दूसरी धारा गौ-रक्षा के सम्बन्ध में है। गौ-रक्षा की धारा इस विधान में जोड़ दी गई है यह संतोष की बात है परन्तु जिस प्रकार हमने अपने मूल अधिकारों, फंडामेंटल राइट्स में यह लिखा है—अनटचेबिलिटी इज ए क्राइम वहीं हमें यह भी लिखना चाहिये था कि—काऊ किलिंग इज ए क्राइम। वह हम नहीं कर सके। तीसरी धारा हमारी भाषा के सम्बन्ध में है। इस धारा से भी हम को पूरा संतोष नहीं है। पन्द्रह वर्ष तक इस देश में अंग्रेजी का दौर-दौरा रहेगा और नागरी लिपि के अन्दर अंग्रेजी अंकों को रखकर उसका भी विरूपण कर दिया गया है। हिन्दी भाषा भाषियों को इससे बड़ा क्षोभ है।

तो मैं यह कहना चाहता हूं कि जिन तीन बातों पर मैंने आरम्भ से ही जोर दिया था, उन तीन बातों से हमें पूरा संतोष नहीं है। परन्तु इन तीन बातों को इस विधान में स्थान मिला, यह अवश्य संतोष की बात है।

अन्त में मैं फिर डाक्टर अम्बेडकर साहब, पंडित जवाहर लाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, मसौदा कमेटी के अन्य सदस्यों और सभापति जी आपके साथ सारी विधान परिषद् को इस बात पर बधाई देता हूं कि हमने इस स्वतंत्र भारत का विधान तैयार कर लिया और ऐसा विधान तैयार कर लिया जिस पर हमें और सारे देश को गर्व हो सकता है।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा: जनरल): सभापति जी, आज इस संविधान की धाराओं की समालोचना होती है। इस समालोचना के अवसर पर मैं दो चार बातें जरूर कहूंगा। पहले तो मुझे यह ख्याल होता है कि जिस आदर्श से हम यह संविधान बनाना चाहते थे, उस आदर्श से हम बहुत दूर भाग गये हैं और अब जो आदर्श हम लोगों के सामने रखे हुए हैं, उस से भारत की आत्मा का कुछ परिचय नहीं मिलता है। जैसा कि सेठ गोविन्द दास जी ने भी कहा है, बहुत लोग कहते हैं कि गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट से इसमें ज्यादातर इस संविधान का जो मसाला दिया गया है, वह ठीक नहीं है। मैं कहता हूं कि ज्यादातर गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट जैसा मसाला लिया गया है, और बाहर के जिन जिन देशों से जो मसाला लिया गया है यह सब लेकर वह जो संविधान बनाया गया है, यह एक खिचड़ी बन गया है। यह खिचड़ी बहुत आदमी जो दारू पीते हैं, उनकी तो कोकटेल के मुवाफिक अच्छा मालूम होता है, यह जो खिचड़ी कभी-कभी खाते हैं, उनको भी अच्छा मालूम होता है? लेकिन प्रत्येक दिन के व्यवहार के लिये यह जो संविधान बनाया गया है, वह ठीक नहीं है और यह स्थायी रूप से चालू नहीं हो सकेगा।

पहले तो हमें यह देखना चाहिये कि जैसे हमने पहले आरम्भ किया था, हर एक प्रान्त की हर एक एक यूनिट बनायेंगे और एक फैडरेशन के ख्याल से इसको

हम बनाने जाते थे। लेकिन बीच में रोक कर हमने इसको बन्द कर दिया और जितनी यूनिट हैं, उनके हाथ से सब शक्ति छीन ली, यह तैयार ड्राफ्ट कांस्टिट्यूशन ऐसा ही मालूम होता है। और प्रान्तों के ऊपर जैसे अविश्वास करके ड्राफ्ट कांस्टिट्यूशन बनाया गया है। विश्वास विश्वास से जन्मता है, लेकिन इस विधान में प्रान्तों पर विश्वास नहीं है। हर एक प्रान्त के ऊपर इतनी कड़ी जंजीर बांधी गई है कि कोई प्रान्त अपने को ऐसा नहीं समझ सकता है कि वह स्वाधीन बन गया है। हर एक प्रान्त, अब भी जब यह ड्राफ्ट कांस्टिट्यूशन चालू होगा, तो उनको ऐसा मालूम पड़ेगा कि मानो वह दूसरी नई गुलामी में पड़ गये हैं। इसलिये मैं डॉक्टर अम्बेडकर को, जिन्होंने इतना परिश्रम किया है, उसके लिये मैं जरूर उन्हें धन्यवाद देता हूं, लेकिन जब वह बदलते बदलते एक मरकट (बन्दर) बना दिया, इस लिये मैं इस को पसन्द नहीं कर सकता हूं और उनको हार्दिक धन्यवाद नहीं दे सकता हूं। यह तो मैं कह सकता हूं कि यह सिर्फ डॉक्टर अम्बेडकर के हाथ का काम नहीं है, वह ऐसा कहेंगे और यह सच भी है। देश में जो प्रधान दल है, उस दल की मंशा के ख्याल से डॉक्टर अम्बेडकर को भी तोड़ मरोड़ कर उसको बनाना होता है। मुझे तो ऐसा आभास होता है कि देश को दो तीन बरस बाद एक नया संविधान जरूर बनाना होगा। पहले जो हम लोगों के सामने ड्राफ्ट कांस्टिट्यूशन पेश किया गया था, उसमें जवाहर लाल का जो प्रारंभिक भाषण था, उसमें वह बहुत जोर-शोर के साथ बोलते थे सावरिन इंडिपेंडेंट रिपब्लिक की बात, लेकिन धीरे-धीरे उसकी जगह आ गया डेमोक्रेटिक रिपब्लिक। पहले जवाहर लाल जी ने कहा था कि कामनवैल्थ में रहना यह तो हम लोगों के लिये कलंक है, उसमें हम कभी नहीं रह सकते हैं। जिस दिन हम स्वाधीन होंगे हम कोमनवैल्थ से निकल जायेंगे। लेकिन आज मैं देखता हूं कि हम उसी कामनवैल्थ में घुसे हुए हैं। यह तो ऐसा हो रहा है जैसे बिना जहाज का लंगर उठाये हम जहाज चलाने की कोशिश करते हैं, तो वह जहाज नहीं चलता है, और वह जहाज नहीं चलेगा। यह आप देख सकते हैं और फिर उसमें क्या है? इसमें कोई ऐसी बोल्ड पालिसी नहीं है। शायद हम लोगों के दिल और दिमाग में कोई ऐसा साहस, कोई ऐसी बुद्धि नहीं आई है, जिससे हम इस देश को जैसा उचित होगा वैसा विधान बनायेंगे। हम तो बराबर पश्चिम की ओर ताक रहे हैं और दुनिया कैसे चलती है, इसको देखते रहते हैं। जवाहर लाल जी अभी अभी कहते हैं कि हम अपना विधान ऐसा बनायेंगे कि कि सारी दुनिया हमारी तरफ देखेगी और हमारी तरफ आयेगी। दुनिया कैसे इंडिया की तरफ आयेगी? इंडिया में क्या है? इस ड्राफ्ट कांस्टिट्यूशन में क्या है। जो चरखा इस भारत भूमि का आदर्श था और महात्मा गांधी जी का प्रिय था इस चरखे को फैंक दिया गया और जो चरखा नहीं है उसके स्थान पर एक राज्य चक्र लगा दिया है। और फिर जब मैं यह ड्राफ्ट कांस्टिट्यूशन देखता हूं, पहले तो यह था कि उसमें नेशनल सौंग होगा, बन्दे मातरम् होगा, जनमन गण होगा, वह सब कहां भाग गया? इस कांस्टीट्यूशन में है क्या? कल सेठ गोविन्द दास जी ने कहा था कि कऊ स्लाटर बन्द करना चाहिये। यह तो धीरे-धीरे होगा ही। तो जिस आर्टिकल में यह लिखा है कि यह कार्य धीमे-धीमे होगा, उसमें साफ तौर से यह नहीं बतलाया गया है कि हम कऊ स्लाटर एक दम बन्द करते हैं। क्यों नहीं करते हैं? क्या हम लोगों के दिल में कुछ डर है? फिर हम देखते हैं कि इस संविधान में हम कैसी व्यवस्था करेंगे, सोशलिज्म या और कुछ। यह तो ठीक नहीं है। एक ओर हम व्यक्तिगत सम्पत्ति, प्राइवेट प्राफिट, देने की व्यवस्था रखते हैं और फिर यह भी कहते हैं कि गवर्नमेंट के

[श्री लक्ष्मीनारायण साहू]

साधन महदूद हैं। इसी लिये प्राहिबिशन भी अभी नहीं करते हैं। इस ही लिये यह दारू चलती है। यह दारू तो चलती ही रहेगी जब तक हम दिल में यह निश्चित नहीं कर लेंगे, कि हम क्या करना चाहते हैं? जब तक हम लोगों का आदर्श, हम लोगों के भीतर, प्रतिफलित नहीं होगा, तब तक हम बाहर क्या प्रतिफलित कर सकते हैं? इस लिये हम लोगों को यह बात अच्छी तरह सोचना चाहिये। चरखा जो भारत जाति का प्रतिबिम्ब था हम रखेंगे या नहीं।

श्री एच.वी. कामतः प्रतीक।

श्री लक्ष्मीनारायण साहूः प्रतीक ठीक है। प्रतीक। फिर नेशनल सौंग, नेशनल फ्लैग। हम लोग कुछ तय ही नहीं करते। आखिर यह सब है क्या? और सब कुछ कहां चला गया? प्राहिबिशन के लिये कहते हैं कि धीरे-धीरे चलो। धीरे-धीरे चलो। यह महात्मा जी का सिद्धान्त कहां गया। अभी एक वक्ता ने कहा कि यदि आज मैं एक रोज के लिये डिक्टेटर होता तो पूरे तौर से प्राहिबिशन हो जाता। हम लोग कहते हैं कि धीरे-धीरे चलो। दारू भी धीरे-धीरे छोड़ो। हम लोगों के प्रदेश (उड़ीसा) में ग्रीन बार, ब्लू बार बने हैं। आज हम प्राहिबिशन करते हैं तो फिर यह सब बार क्यों बनाते हैं। अभी कटक में ब्लू बार और ग्रीन बन गये हैं। इसके बाद मैं यह कहता हूं कि हम लोगों को फिर यह निश्चय कर लेना चाहिये कि हम कामनवैल्थ में रहेंगे या नहीं? हम सोशलिज्म स्थापित करेंगे या नहीं? यहां तो ऐसा है कि ऐंग्लो इंडियन को स्पेशल प्रिविलेज देते हैं, क्यों देते हैं यह मेरी समझ में नहीं आता है। जो जाति यहां इतने आनन्द में रही है रेलों में और जहां-जहां भी गये उसी अवस्था में रहे हों वह जितने लायक हैं उनके माफिक दूसरे भी यदि लायक हों तो भी इतनी सुविधा नहीं मिलती है जितनी ऐंग्लो इंडियन्स को दी गई है। उसी लिये मैं कहता हूं कि रेलवे में हम लोगों को सुभीता नहीं है। पहले देश का नाम भारत रखा गया लेकिन भारत दुनिया की समझ में नहीं आयेगा इस लिये "इंडिया दैट इज भारत" कर दिया। यह क्या बात है। नैशनल लैंग्वेज क्या होगी? इसकी कोई चर्चा नहीं है। इसके विपरीत आफिशियल लैंग्वेज क्या होगी ऐसा लिखा है। वह हिन्दी होगी। फिर अंग्रेजी चलेगी। फिर पांच बरस के बाद देखेंगे। फिर पन्द्रह बरस के बाद फिर देंखेंगे। ऐसा कहा गया है। इस तरह से हमारा कांस्टिट्यूशन क्या बन गया है। मैं समझता हूं कि यह सब एक दम वृथा है, एक दम रद्दी है। इस में मुझे कुछ मालूम नहीं होता है। कामत साहब ने बहुत धीरे चलकर गाड भी घुसा दिया। बाजे लोग कहते हैं गाड भी नहीं है। भारत के आदमी गाड नहीं चाहते हैं। हम लोगों को ठीक कर लेना चाहिये। कि जब मेजारिटी के लोग जो तय करते हैं उसको मानें लेकिन मैं देखता हूं कि हम लोग डरते-डरते चलते हैं और इस लिये यह कांस्टिट्यूशन ऐसा बन गया जिस कांस्टिट्यूशन में कुछ मालूम नहीं होता है कि भारत का इसमें प्रतिबिम्ब क्या पड़ता है। मैं तो चाहता था कि अब जब मौका मिलता तो इस संविधान को और भी साफ कर दिया जाता। ठीक किया जाता लेकिन अभी तो मौका नहीं है और यह कुछ नहीं होगा। सिविल लिबर्टिज देखिये। आगे ब्रिटिश जमाने में जितनी सिविल लिबर्टीज लोगों को थी उनको इतना जकड़ दिया गया है कि उतनी सिविल लिबर्टीज भी हम लोगों को नहीं मिलेगी। बहुत से आदमी तो बरसों तक जेलों में रखे जाते हैं। ऐसी सिविल लिबर्टीज हम लोगों को मिली है।

***श्री आर.के. सिधवाः** सिविल लिबर्टीज ब्रिटिश के जमाने में हम लोगों को कितनी थी?

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू:** बहुत ज्यादा थी। जब यह कांस्टिट्यूशन लागू होगा तो आप देखेंगे कि इस संविधान में सिविल लिबर्टीज बहुत कम होगी। भारतवर्ष का जो स्थान है वह ग्राम में है। ग्राम का ख्याल न करके हम सब सिटीजन बन जाते हैं और सिटीजनशिप राइटस मांगते हैं। मैं तो कहता हूं कि ऐसा कुछ होना चाहिये कि विलेजियन के राइट्स होना चाहिये। इस विधान में हम लोगों को विलेजियन-शिप राइट कहीं नहीं मालूम होता। हमको इस समय क्या करना चाहिये। काटेज इंडस्ट्रीज पुनर्जीवित करना चाहिये। लेकिन इसको करने का हमें ख्याल नहीं होता। थोड़े आदमी जब किसी सम्बन्ध में कुछ चिल्लाते हैं तो कह दिया जाता है कि अच्छा इस विषय को भी इसमें रखो। जब हम चाहते हैं कि एक नया संसार बनायें, जब हम कहते हैं कि हिन्दुस्तान नानवायोलेंट होगा और जब हम उसको दुनिया के लिये आदर्श बनाना चाहते हैं तो ऐसा क्यों कहते हैं कि हम कैपिटल पनिशमेंट नहीं उठा सकते हैं। मेरी समझ में नहीं आता है कि हमारे दिमाग में क्या है। आखिर कुछ क्यों नहीं हो पा रहा है। हम लोग बोलते हैं गज्जलिका प्रवाह। हम लोग कुछ चिन्ता नहीं करते हैं। दुनिया जैसा बनाती है जैसा जम्प देती है वैसा हम भी करते हैं। इस लिये मैं तो एक दम परेशान हो गया हूं। यहां जो कांस्टिट्यूशन अभी बनाया जाता है वह है क्या? हम लोगों के जो निर्वाचित गवर्नर होने वाले थे वह कहां गये? पहले तो हम लोगों ने तय कर लिया था कि ऐलेक्टेड गवर्नर हों। फिर उसको रिओपन करके उसको अपोइंटेड गवर्नर बना दिया। यह सब हो रहा है मेजारिटी के नाम पर। यह हम देख रहे हैं कि देखते देखते जैसे हम लोगों का देश पत्थर जैसा हो गया है। डिसेंट्रलाइजेशन की बात एक दम नहीं है आदर्श तो था इतने बड़े भारत वर्ष को विकेन्द्रित करना चाहिये। और ठीक करना चाहिये। लेकिन इतना केन्द्रीकरण हो गया कि एक केन्द्र हो गया और यूनिट जितने हैं सब म्यूनिसिपैलिटीज और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के माफिक हो गये हैं। इस प्रकार जो दुर्बल यूनिट होगा वह तो एक दम मर जायेगा और जो सबल यूनिट है वह सेंटर से कुछ बढ़ावा लेकर आगे बढ़ जायेगा। बम्बई, मद्रास या सब बड़े-बड़े यूनिट्स जैसे यू.पी. भी सुविधा लेकर और रुपये भी लेकर आगे बढ़ जायेंगे। यह ठीक है कि कंसोलिडेटेड फंड से हर एक यूनिट जिस को घाटा है उसको पैसा दिया जायेगा। लेकिन देगा कौन। वह जो कंसोलिडेटेड फंड है वहां जो बड़े-बड़े मद्रास के और बम्बई के लोग बैठे हैं वह सब सोच विचार करके देंगे। बेचारे आसाम को मार देंगे, उत्कल को मार देंगे। हम गुलाम हो कर रहेंगे। मैं देख रहा हूं, दो तीन बरस से देख रहा हूं कि उत्कल को क्या सुविधा मिली है। इसी लिये मैं कहता हूं कि यह कांस्टिट्यूशन हमारी पसन्द का नहीं है।

***श्री के. हनुमनथय्या:** अध्यक्ष महोदय, आज से लगभग तीन वर्ष पूर्व यह सभा एक संविधान के निर्माण के लिये समवेत हुई थी। अब हमारा श्रम समाप्त होने जा रहा है। इस सभा ने तथा विशेषत: मसौदा-समिति ने जिस कठिन स्थिति में अपने कार्य को समाप्त किया उसके लिये वे बधाई के पात्र हैं।

आज, संविधान के पूर्ण चित्र पर दृष्टिपात करने पर मेरी अपनी यह धारणा होती है कि इस पूरे संविधान की न तो प्रशंसा की जा सकती है और न इसका स्वागत ही किया जा सकता है। इसके बहुत से गुण अवश्य हैं—कोई सन्देह नहीं

[श्री के. हनुमनथय्या]

कि इस संविधान में स्वतंत्रता, समता तथा बन्धुता के सिद्धान्त सन्निहित हैं और यह हर्ष की बात है। किन्तु, श्रीमान, इस संविधान में कई अन्य बातें ऐसी हैं जिनसे सम्भवत: बहुत से लोगों की आशायें पूरी न हो सकें। प्रश्न यह उठता है कि आखिर इस संविधान का निर्माण किसने किया।

जब मैंने मसौदा-समिति के सदस्यों की नामावलि देखी तो मैं यह कहूंगा कि मेरी यह धारणा हुई कि उनमें से अधिकांश बहुत ही आदरणीय पुरुष हैं। उनमें से अधिकांश सुयोग्य व्यक्ति हैं। किन्तु उनमें से कुछ ही की स्वातंत्र्य आन्दोलन से सहानुभूति रही। मसौदा-समिति के सदस्यों की नामावलि को देखने से मेरी यह धारणा बनती है कि उनमें से अधिकांश लोगों ने स्वातंत्र्य आन्दोलन में उस अर्थ में भाग नहीं लिया जिस अर्थ में हमारे अधिकांश नेताओं ने भाग लिया था। स्वभावत: उन्होंने अपने दृष्टिकोण तथा अपने ज्ञान को संविधान में स्थान दिया है। कांग्रेस को, अथवा देश को इस प्रकार के ज्ञान अथवा मनोविज्ञान की आवश्यकता नहीं है। मैं नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूं कि इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्हें स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व की बहुत-सी विधियों का तथा नियमों का ज्ञान है। उन्हें न्यायालय-निर्णय-विधि तथा संहिता-विधि का बहुत अच्छा ज्ञान है। परन्तु भारत जैसे महान देश के लिये तथा उसके भविष्य के लिये यह ज्ञान पर्याप्त नहीं था। हम चाहते थे वीणा और सितार का संगीत और हमें प्राप्त हुआ अंग्रेजी वाद्यों का संगीत। इसका कारण यह था कि हमारे संविधान-निर्माताओं की शिक्षा-दीक्षा ही इस ढंग की हुई थी। मैं उनको दोष नहीं देता। मैं उन लोगों को अर्थात् हममें से उन लोगों को दोष देता हूं जिन्होंने उन्हें यह कार्य सौंपा।

जरा संविधान के ढांचे को तो देखिये, स्वातंत्र्य संग्राम के दिनों में हमने कुछ सिद्धान्तों तथा आदर्शों को अंगीकार किया था, जिन्हें महात्मा गांधी ने हमारे सामने रखा था और जिन की शिक्षा हमें दी थी। अपनी विवरणपूर्ण भाषा में उन्होंने पहली सलाह यह दी थी कि इस देश के संविधानिक ढांचे का आधार विस्तृत होना चाहिये और उसका स्वरूप पिरैमिड के आकार का होना चाहिये। इसकी नींव जमीन पर डालनी चाहिए और उसे शंकु के समान ऊंचा उठाना चाहिए। किन्तु किया गया है बिल्कुल इसका उल्टा। पिरैमिड को उलट दिया गया है। प्रान्तों और राज्यों से तथा लोगों से अधिकार ले लिया गया है और सब शक्ति केन्द्र को दे दी गई है। यदि महात्मा गांधी किसी संविधान को नहीं चाहते थे तो वह इसी प्रकार का संविधान था। हम अभी इसका निर्णय नहीं कर सकते कि लोकतन्त्रात्मक संविधान में विश्वास खोकर तथा गांधी जी के संविधान निर्माण के विचारों का परित्याग करके हमने ठीक किया है या नहीं। इसका निर्णय भविष्य ही करेगा।

श्रीमान, इस संविधान में कई बहुत दिलचस्प परस्पर-विरोधी बातें हैं। हमने एक ऐसे गणराज्य का चित्र खींचा है जिसके शिखर पर एक राजा होगा और उसके नीचे राजप्रमुख होंगे। हम कहते हैं कि यह संविधान एक संघीय संविधान है परन्तु वास्तव में यह एक—एक सत्तात्मक संविधान है। हम कहते हैं कि यह संविधान लोकतंत्रात्मक है किन्तु वास्तव में लोकतंत्र का संकेन्द्रण दिल्ली में ही हुआ है और देश के अन्य भागों में उसे उस अर्थ में तथा उस भावना से कार्यान्वित नहीं किया जा रहा है। यह हिन्दुओं की इस विख्यात धारणा के समान है कि यदि

किसी व्यक्ति की स्वर्ग जाने की आकांक्षा है तो इसके लिये गंगा-स्नान, विशेषत: काशी में गंगा-स्नान के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है। देश का अन्य कोई भी भू भाग इतना पवित्र नहीं है और न इस योग्य ही है कि लोगों को स्वर्ग भेज सके। इस संविधान के निर्माण में भी बहुत कुछ इसी प्रकार की बातों को स्वीकार किया गया है। यदि लोकतंत्र किसी प्रदेश में पनप सकता है और वास्तव में उसे कार्यान्वित किया जा सकता है तो दिल्ली में ही अन्य किसी स्थान में नहीं। यह संविधान इस भावना से बनाया गया है। इसके अतिरिक्त जिन लोगों ने संविधान के निर्माण में योग दिया है वे न केवल प्रान्तों और राज्यों के लोगों को बल्कि भविष्य को भी सन्देह की दृष्टि से देखते रहे हैं। उन्होंने अनेक पीढ़ियों तक लोगों को दुर्व्यवहार करने से रोकने के लिये बहुत से उपबन्ध रखे हैं। हमने संविधान निर्माण का कार्य इस उद्देश्य से आरम्भ नहीं किया था किन्तु प्रवृत्ति इस ओर बढ़ती गई।

इसके अतिरिक्त भाषा का प्रश्न भी है जिसके सम्बन्ध में मुझ से पूर्व बोलने वाले वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किये हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हम यह चाहते थे कि संविधान हमारी भाषा में बनता किन्तु हम इस विदेशी भाषा को रखने के लिये विवश हुए। ये भी दिलचस्प परस्पर विरोधी बातें हैं। किन्तु ये परस्पर-विरोधी बातें कोई गम्भीर बातें नहीं हैं। हमने जिस गणराज्य का चित्र खींचा है उसके शिखर पर यद्यपि राजा है, और उसके नीचे राजप्रमुख हैं, किन्तु वे उसे हानि नहीं पहुंचा सकेंगे। हम जिस व्यवस्था को स्थापित करने जा रहे हैं उसमें वे बहुत कुछ शक्तिहीन ही रहेंगे।

यद्यपि हमारे संविधान-निर्माताओं ने विकेन्द्रीकरण का मार्ग नहीं अपनाया है। किन्तु फिर भी मुझे भारत के लोगों पर विश्वास है। वे भविष्य में आगे बढ़कर लोकतन्त्र को हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक न्यायपूर्ण ढंग से कार्यान्वित कर सकेंगे। चाहे हम जैसे भी नियमों को रखें और जैसे भी अनुच्छेदों को बनायें किन्तु मनुष्य के जीवन में मनुष्य के मस्तिष्क का, तथा मनुष्य की शक्ति का अधिक महत्व होता है। मुझे पूरी आशा है कि भविष्य में वे सभी दोषों को दूर कर सकेंगे।

स्वभावत: मेरे कुछ मित्रों को इसका खेद है कि संविधान हिन्दी में नहीं लिखा गया और राष्ट्र भाषा को सीधे-सीधे नहीं स्वीकार किया गया। यह भी स्थितिवश तथा कालवश ही हुआ है। यदि हममें से कुछ लोगों को, बालकाल से ही हिन्दी में शिक्षा नहीं मिली है तो इसके लिये हम दोषी नहीं हैं। यह उस समय की स्थिति का दोष है। हमने अंग्रेजी सीखी और इस लिये अंग्रेज़ी से प्रेम करने लगे। एक दिन वह आयेगा जब लोग हिन्दी सीखेंगे और हिन्दी से उतना ही प्रेम करने लगेंगे। केवल कुछ धैर्य, उदारता तथा सहिष्णुता की आवश्यकता है और मुझे इस की प्रसन्नता है कि जो लोग हिन्दी के प्रेम में अन्धे हैं वे भी इतनी सहिष्णुता तथा उदारता दिलाने के लिये तैयार हैं।

मैं एक राज्य का प्रतिनिधि हूं और यदि मैं अपने अन्तरतम विचारों को व्यक्त नहीं करूंगा तो मैं अपने प्रति न्याय नहीं करूंगा। संविधान में अनुच्छेद 371 चाहे

[श्री के. हनुमनथय्या]

जिन कारणों से भी रखा गया हो किन्तु मुझे उसे देखकर हर्ष नहीं होता। मेरे हृदय में यह विचार भी उठता है कि हमारे आत्म-सम्मान का आदर नहीं किया गया है। मेरी यह धारणा है कि कई पीढ़ियों तक लोग इस पर आश्चर्य करेंगे कि हम राज्यों के लोगों ने अनुच्छेद 371 को कैसे स्वीकार कर लिया। हो सकता है कि राज्यों की कुछ सरकारों ने, अथवा कुछ राजनैतिक नेताओं ने, वैसे कार्य नहीं किये हैं जैसे कार्यों की उनसे हमारे बड़े-बड़े नेता आशा करते थे, और वास्तव में इस पर भी विचार करने की आवश्यकता है, किन्तु मैं तो इस सिद्धान्त का समर्थक हूं कि लोकतंत्र अपना सुधार स्वयं कर लेता है। यदि किसी विशेष प्रदेश में लोकतंत्र में दोष आ जाये तो बुद्धिमत्ता इसमें नहीं है और न यह खतरे से खाली ही है कि बाहर का कोई व्यक्ति उसे दूर करे। यह व्यवस्था चल नहीं सकती। सम्भव है कि जब तक सरदार पटेल रहेंगे तब तक वे सब दोष दूर करते रहेंगे। किन्तु हम इस संविधान को एक पीढ़ी के लिये, अथवा, एक शताब्दी के लिये नहीं बना रहे हैं बल्कि असंख्य शताब्दियों के लिये बना रहे हैं। क्या हम इसकी प्रत्याभूति दे सकते हैं कि शासक की बागडोर हमेशा एक ऐसे व्यक्ति के हाथ में रहेगी जो हमारे महान नेता सरदार पटेल के समान सुयोग्य होगा और वह हमेशा दोषों को दूर करता रहेगा? यह ध्यान में रखना चाहिये कि सरदार पटेल अपने वैयक्तिक प्रभाव के कारण मामलों को ठीक कर सकते हैं न कि अपने संविधानिक प्राधिकार के कारण। संविधानिक नियमों अथवा उदाहरणों के आधार पर वैयक्तिक प्रभाव नहीं बढ़ाया जा सकता। इस लिये जिन लोगों ने इस अनुच्छेद को रखा है उनका यदि इस सिद्धान्त में विश्वास होता कि लोकतंत्र अपने दोषों को स्वयं दूर करने की सामर्थ्य रखता है और उन्होंने यह लोगों के लिये छोड़ दिया होता कि किसी क्षेत्र में किसी मंत्रिमंडल, अथवा विधान-मंडल, अथवा किसी मंत्री विशेष के उचित व्यवहार नहीं करने पर वे उसे ठीक करें तो मैं उनकी तथा इस सभा की प्रशंसा करता और उन्हें धन्यवाद देता। यह अनुच्छेद 371 सच्चे लोकतंत्र के सिद्धान्तों का खंडन ही नहीं करता किन्तु अन्ततोगत्वा इसी के कारण संघर्ष का तथा कई संविधानिक संग्रामों का सूत्रपात होगा। संतोष की बात केवल यह कि यह केवल दस वर्ष की कालावधि तक रहेगा। किन्तु इस दस वर्ष की कालावधि में भी हम तथाकथित "दुर्व्यवहार" की छाया से त्रस्त रहेंगे। यह भय हमारे हृदय में घर कर गया है। मुझे आशा है कि ऐसे अवसर नहीं आयेंगे जब इस अनुच्छेद को प्रयोग में लाना पड़ेगा। मैं यह कहूंगा कि यह राज्यों के लोगों की भी जिम्मेदारी है कि वे ऐसा व्यवहार करें कि अनुच्छेद 371 अन्ततोगत्वा निरर्थक सिद्ध हो।

श्रीमान, हमने जिस संविधान का निर्माण किया है वह एक विचित्र प्रकार का संविधान है। इस संविधानिक विधि तथा इतिहास के विद्यार्थी दो प्रकार के संविधानों से परिचित थे अर्थात् फैडरल संविधान से और एकसत्तात्मक संविधान से। यह संविधान इन दो शीर्षकों में से किसी शीर्षक के अधीन नहीं आ सकता। यह एक नवीन प्रकार का संविधान है जिसे फैडरल संविधान अथवा एकसत्तात्मक संविधान न कह कर मैं "संघीय संविधान" कहूंगा। संविधानिक शब्दावलि को यह पदावलि इस सभा की देन है। इसका निर्णय भविष्य में ही हो सकेगा। कि इस प्रकार का संविधान फैडरल संविधानों के समान ही सफल होता है या नहीं। यह एक नवीन प्रकार का संविधान है और हमें इसी भावना से इसे कार्यान्वित करना है।

आखिर लोग यह कहते हैं कि नियम अथवा अनुच्छेद चाहे जैसे भी हों, उनका सफल होना उन पर नहीं निर्भर होता बल्कि उन लोगों पर निर्भर होता है जो उन्हें कार्यान्वित करते हैं। इसी विश्वास के कारण, न कि संविधान द्वारा अद्‌भुत विश्वास के कारण, हम निराश नहीं हुए हैं। मुझे यही आशा है कि भारत के लोग, तथा उनके प्रतिनिधि, इस संविधान को प्रवर्तन में ला सकेंगे और चाहे उसके गुण-दोष कुछ भी क्यों न हो उससे देश का अधिक से अधिक हितसाधन कर सकेंगे।

***प्रो. के.टी. शाहः** (बिहारः जनरल)ः अध्यक्ष महोदय, संविधान-विषयक इस वाद-विवाद के अवसर पर मैं समझता हूं कि यह आवश्यक है कि मैं उन भूलों की ओर तथा जान बूझकर की हुई गलतियों की ओर ध्यान दिलाऊं जिन के सम्बन्ध में यथा समय मैंने संशोधन उपस्थित किये थे। किन्तु चूंकि उन संशोधनों को, लगभग उनमें से प्रत्येक को, मसौदाकारों ने पसन्द नहीं किया इसलिये मैं यह समझता हूं कि इस अन्तिम अवसर पर मैं उन गलतियों की ओर ध्यान आकृष्ट कर दूं।

श्रीमान, सभा को स्मरण होगा कि मेरे संशोधन शाब्दिक परिवर्तनों के सम्बन्ध में नहीं थे और न वे किसी ऐसे विषय के सम्बन्ध में थे जो केवल रूप अथवा आकार-सम्बन्धी विवाद का विषय था। इसका यह अर्थ नहीं कि मुझे सुन्दर स्वरूप अथवा सुस्पष्ट भाषा पसन्द नहीं है। वास्तव में मैं यह कहने के लिये विवश हूं कि यद्यपि मि. नज़ीरुद्दीन के समान मेरे मित्रों ने यथेष्ट सुस्पष्ट भाषा तथा यथोचित विराम चिन्हों को रखने के लिये तथा संविधान का सांगोपांग सुन्दर स्वरूप प्रदान करने के लिये बहुत परिश्रम किया किन्तु उनके श्रम की उतनी प्रशंसा नहीं की गई जितनी की जानी चाहिए थी। मेरे इस कथन से यह न समझा जाये कि मसौदा-समिति तथा उसके सभापति और कुछ अन्य सदस्यों ने जो कठिन परिश्रम किया है तथा जिस बुद्धिमत्ता और सावधानी का परिचय दिया है उसकी मैं प्रशंसा नहीं करता। मसौदे की कला की दृष्टि से मैं उस मसौदे को आदर्श मसौदा नहीं समझता किन्तु मैं यह स्वीकार करता हूं कि जिस स्थिति में इस कार्य को सम्पन्न करना पड़ा उसमें मसौदा-समिति ने, तथा विशेषतः उसके सभापति ने, बदलती हुई स्थिति तथा दशाओं में कार्य करने की योग्यता तथा बुद्धिमत्ता का परिचय दिया। इसके लिये वे इस सभा तथा सरकार की प्रशंसा के पात्र हैं।

इसे स्वीकार करने के पश्चात् भी मैं यह समझता हूं कि मुझे स्वरूप और सिद्धान्त के उन दोषों को बताना चाहिये जिनसे, मेरे विचार से, यह संविधान दूषित है और इस कारण उस स्वरूप को प्राप्त नहीं है जिस स्वरूप की हमें आशा थी। जैसा कि मैं निवेदन कर चुका हूं, मैंने साधारण परिवर्तनों के सम्बन्ध में सुझाव न रखकर मौलिक बातों तथा सिद्धान्तों के सम्बन्ध में संशोधन प्रस्तुत किये थे। अपनी बातों को उन्हीं तक सीमित रख कर मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि प्रस्तावना में तथा इस सभा के सर्वप्रथम प्रस्ताव में हमने जो वचन दिया है वह उस अर्थ में पूरा नहीं किया गया है जिस अर्थ में हम आशा करते थे। उदाहरणार्थ हमारा यह दावा है कि हमारा देश सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न स्वतंत्र गणराज्य है। किन्तु जब तक वह ब्रिटिश राष्ट्रमंडल का सदस्य बना रहेगा तब तक हम उसे सम्पूर्ण प्रभुत्व

[प्रो. के.टी. शाह]

सम्पन्न स्वतंत्रता को व्यवहार में नहीं ला सकते जिसका हमने इस संविधान में उल्लेख किया है और जिसे हम समझते हैं हम इस संविधान के द्वारा प्राप्त कर रहे हैं।

हो सकता है कि संविधान का स्वरूप लोकतंत्रात्मक हो और उसका लक्ष्य भी लोकतन्त्र ही हो। किन्तु यदि कोई व्यक्ति इस संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों की सावधानी से परीक्षा करे तो उसे ज्ञात हो जायेगा कि लोगों का शासन, लोगों के लिये शासन और लोगों द्वारा शासन के रूप में लोकतन्त्र की मंजिल अभी बहुत दूर है।

उदाहरणार्थ जनमत-संग्रह द्वारा लोगों से परामर्श करने के अधिकार के सम्बन्ध में अथवा संविधान को वास्तविक अर्थ में लोक-तंत्रात्मक बनाने के लिये किसी उग्र विधि का निर्माण करने के सम्बन्ध में लोगों की शक्ति के बारे में यथोचित अवसर पर कई सुझाव रखे गये थे। किन्तु वे सब अस्वीकार कर दिये गये। बहाना यह बनाया गया है कि अभी हम लोकतन्त्र को पूर्ण रूप से व्यवहार में लाने के उपायों को अपनाने के योग्य नहीं हुए हैं। हमसे कहा गया है कि हमें अधिक अनुभव की आवश्यकता होगी और अधिक शिक्षा की भी आवश्यकता होगी। साथ ही जनसाधारण को राजनैतिक शक्ति के सम्बन्ध में तथा अपने उत्तरदायित्वों के सम्बन्ध में अधिक सचेत करना है ताकि वे लोकतंत्रात्मक शासन में इस प्रकार के उग्र सुधारों को अधिक सफलता के साथ कार्यान्वित कर सकें। श्रीमान, मैं अपने देशवासियों की क्षमता के तथा इस देश में प्रवृत्त लोकतंत्रात्मक शासन के इस अनुमान को स्वीकार नहीं कर सकता। लोकतन्त्र को कार्यान्वित करने की क्षमता उत्तरदायित्व ग्रहण करने से प्राप्त होती है न कि कागज पर केवल घोषणा करने से और उसके स्वरूप का बहुत कुछ निराकरण करने से। यदि पहले हम इन तर्कों को स्वीकार कर लेते और अंग्रेजों की इस सम्मति को स्वीकार कर लेते कि भारत के लोग न तो इतने शिक्षित हैं और न उन्हें अपने अधिकारों का अथवा अपने दायित्वों का इतना ज्ञान है कि वे अपने यहां लोकतंत्रात्मक शासन चला सकें तो हम अभी तक न तो स्वतंत्रता को प्राप्त कर सकते और न जिस स्वराज्य पर हम गर्व करते हैं उसे ही प्राप्त कर सकते।

चूंकि आपका अब भी लोगों पर पूर्ण विश्वास नहीं है चूंकि आप अब भी यह नहीं समझ पाये हैं कि लोकतंत्र को प्रयोग में लाने से ही इस देश में वास्तव में लोकतन्त्र की स्थापना होगी, इस लिये आपने मेरे उन सुझावों तथा संशोधनों को स्वीकार नहीं किया जिनका उद्देश्य संविधान में ऐसे उपायों तथा साधनों को स्थान देना था जिनसे लोगों की इच्छानुसार, लोगों के हितार्थ, लोगों के प्रतिनिधियों के द्वारा यथोचित कार्य किया जाता।

केवल यही बात नहीं हैं कि आपका जनसाधारण पर विश्वास नहीं है। इससे भी अधिक सच्चाई इस कथन में है कि आपको अपने नेताओं पर ही विश्वास नहीं है। यदि आपके नेता वास्तव में लोकप्रिय हैं, यदि आपके नेता वास्तव में लोगों की अर्ध चेतना में संचित भावनाओं, आशाओं तथा आकांक्षाओं के मूर्त रूप हैं तो आपको इस सम्बन्ध में तनिक भी सन्देह नहीं होना चाहिये कि संकट उपस्थित

होने पर लोग नेताओं के बताये हुए मार्गों पर चलेंगे और मेरे बताये हुए साधनों से लाभ ही होगा, हानि नहीं होगी।

इसलिये मेरी यह धारणा है कि यद्यपि भारत के लोगों को यह विश्वास दिलाया गया है कि उन्होंने सक्रिय लोकतंत्रात्मक व्यवस्था प्राप्त कर ली है किन्तु वास्तव में वह पूर्ण रूप से इस संविधान में सन्निहित नहीं है।

इसके अतिरिक्त हममें से उन लोगों को जिन्होंने अपने सामने स्वतंत्रता के विशेष आदर्श रखे थे, इस संविधान की शब्दावलि से निराश होना पड़ा है। मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि मूलाधिकारों और नागरिक स्वतंत्रताओं के सम्बन्ध में तथा सामाजिक नीति के निदेशक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में, जो अध्याय है वे उस रूप में नहीं हैं जिस रूप में वे रखे जा सकते थे। मेरे विचार से उन अनुच्छेदों द्वारा केवल वचन ही दिया गया है और उनके आधार पर किसी कार्य के किये जाने की आशा नहीं है। प्रत्येक विषय के सम्बन्ध में, प्रत्येक अनुच्छेद में, प्रत्येक खण्ड में और प्रत्येक खण्ड के प्रत्येक वाक्य में कोई न कोई अधिकार प्रदान किया गया है अथवा उसकी घोषणा की गई है किन्तु उसे निबन्धित और प्रतिबन्धित कर दिया गया है अथवा कुछ ऐसी आकस्मिक स्थितियों पर आश्रित किया गया है जो उत्पन्न हो या न उत्पन्न हो। सम्पूर्ण संविधान में कोई भी ऐसी बात नहीं है जिससे यह प्रकट होता हो कि ये अधिकार और स्वतंत्रतायें केवल कागज़ पर लिखे हुए अधिकार नहीं रहेंगे किन्तु वास्तव में प्राप्त किये जायेंगे और उनके कारण लोगों का जीवन आनन्दपूर्ण हो उठेगा।

श्रीमान, मैं कुछ उदाहरण दूंगा। निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा के अधिकार पर, आजीविका प्राप्त करने के अधिकार पर व्यक्तिक स्वातंत्र्य के अधिकार और लगभग प्रत्येक अधिकार पर प्रतिबन्ध लगाये गये हैं। मुझे आशा थी कि हम इस प्रकार के प्रतिबन्धों को एक ऐसे संविधान में नहीं रखेंगे जिसके बारे में हमारा यह दावा है कि वह लोकतन्त्रात्मक तथा लोकप्रिय है और भारत के लोगों के चुने हुए प्रतिनिधियों ने, तथा विश्वासपात्र नेताओं ने बनाया है। श्रीमान, यह खेद की बात है बहुत खेद की बात है कि व्यक्तिक स्वातंत्र्य के अधिकार के समान साधारण अधिकार भी आपात-सम्बन्धी उपबन्धों के अधीन एक भ्रामक अधिकार हो जाता है। किसी व्यक्ति को किसी बहाने से बिना मुकद्दमा चलाये हुए तीन महीने तक निरुद्ध किया जा सकता है इसलिये यह कोई व्यक्तिक स्वातंत्र्य का अधिकार नहीं है बल्कि बिना मुकद्दमे के और बिना यथोचित न्यायिक कार्यवाहियों के तीन महीने तक निरुद्ध रहने का अधिकार है।

बहुत से बहाने बनाये जा सकते हैं। मेरी यह धारणा है कि लोगों को मूलाधिकारों से अथवा नागरिक स्वतंत्रताओं से वंचित रखने के लिये अथवा उन्हें प्रतिबन्धित करने के लिये कोई कारण नहीं बताये जायेंगे। किन्तु बहाने बनाकर कठिनाइयां उपस्थित की जायेंगी। मेरे विचार से इस संविधान में मूलाधिकार तथा नागरिक स्वतंत्रताओं के विषय में जो अध्याय है उससे अधिक दुखद अध्याय और कोई नहीं है।

[प्रो. के.टी. शाह]

इसके अतिरिक्त संविधान में कोई उपबन्ध ऐसा नहीं रखा गया है जिसमें लोगों के आभारों अथवा कर्तव्यों की परिभाषा की गई हो ताकि वे यह समझ सकें कि जहां उन्हें कुछ अधिकार प्राप्त हैं वहां उन पर लोकतंत्र की नागरिकता के कुछ आभार भी हैं। आप पूर्ण अधिकारों को इसलिये नहीं प्रदान कर रहे हैं कि आपको भय है कि लोकतंत्र नृशंस समूहतन्त्र में परिणत हो जायेगा। इस लिये आप ने नागरिकों के आभार-विषयक अध्याय को प्रतिबन्धित किया है।

मैं एक अन्य उदाहरण यह दर्शाने के लिये दूंगा कि इस देश में कार्यशील लोकतंत्र अभी भविष्य की ही व्यवस्था है। कम से कम उसे इस संविधान में कोई स्थान नहीं मिला है। मेरा अभिप्राय राज्य के विभिन्न अंगों की स्थापना तथा उनके कृत्यों से है। मैंने बार-बार इस उद्देश्य से संशोधनों को उपस्थित किया कि यदि राज्य के मुख्य अंगों की शक्तियों, कृत्यों तथा संगठनों का पूर्णतया पृथक्करण न भी हो सके तो कम से कम वे इतने स्वतंत्र तो हों ही कि संविधान के अधीन उन्हें जिस क्षेत्र में काम करने की शक्ति प्रदान की गई है उसमें वह बिना बाहर से किसी के हस्तक्षेप के अथवा राज्य के किसी अन्य अंग के हस्तक्षेप के किसी स्वतंत्रता से कार्य कर सकें। यदि हम विधान मंडल, न्यायपालिका तथा कार्यपालिका विषयक अध्यायों की परीक्षा करें तो हम इसी निर्णय पर पहुंचेंगे कि इन संस्थाओं का स्वातंत्र्य तथा प्रभुत्व व्यवहार में निरर्थक सिद्ध होगा। इस सभा के कई संविधान के पंडितों का यही मत है कि शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धान्त का जनाजा निकल चुका है। मेरा अपना यह मत नहीं है। वे लोग भी जो यह चाहते हैं कि राज्य के विभिन्न अंगों के पारस्परिक सम्बन्ध रहें और वे एक दूसरे को प्रभावित करें, ऐसे रक्षणों तथा उपबन्धों को रखना चाहते हैं जिनके फलस्वरूप प्रत्येक अंग स्वतंत्रता से तथा विश्वास से कार्य कर सकें। किन्तु ये रक्षण नहीं रखे गये हैं। श्रीमान, समय के अभाव के कारण मैं संविधान के प्रत्येक ऐसे अनुच्छेद का विवरण नहीं दे सकता जिससे यह स्पष्ट हो जाता।

मुझे यह कहना पड़ रहा है कि देश के शासकों के आचरणों में कुछ पवित्रता तथा त्याग लेने के लिये, तथा निर्दोष साधनों द्वारा प्रशासन को भ्रष्टाचार से बचाने के लिये, इस सभा में बार-बार प्रत्यत्न किये गये किन्तु वे उतने सफल नहीं हुए जितने सफल होने की मुझे आशा थी। श्रीमान, बार-बार मैंने इस उद्देश्य से संबोधन उपस्थित किये कि राज्य का प्रधान और राज्य के उच्च शासनाधिकारी अपने दलों की राजनीति तथा उनके प्रभाव से मुक्त रहें और ऐसे मामलों में दिलचस्पी न रखें जिनके कारण उन्हें अपने कर्तव्यों का ठीक-ठीक ज्ञान न हो सके और वे अपनी शक्तियों का दुरुपयोग करें। किन्तु श्रीमान, बार-बार यही बहाना बनाया गया कि सांसारिक व्यवहार में तथा साधारण मनुष्यों के बीच में यह बहुत ही आदर्शवादी-सिद्धान्त सिद्ध होगा। बिना केवल साधारण मनुष्य होने का दावा किये हुए यह उन लोगों को शोभा नहीं देता जिनका यह दावा है कि वे महात्मा गांधी के पद-चिन्हों का अनुसरण करते आये हैं, उन्हीं के आदर्शों से प्रेम करते आये हैं, और राष्ट्रपति द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को ही कार्यान्वित करते आये हैं।

ये कुछ उदाहरण हैं। मैं और भी कई उदाहरण दे सकता हूं जिनसे यह स्पष्ट हो सकता है कि हम जिस संविधान को पारित कर रहे हैं उसमें व्यवहारिक लोकतंत्र

के सिद्धान्त को पूर्ण रूप से नहीं अपनाया गया है। उदाहरणार्थ बहुत से निकायों के पारस्परिक सम्बन्ध, विभिन्न अंगों की स्थापना तथा स्थानीय स्थापित शासन का स्वरूप ही बहुत सीमित है। यदि आप केन्द्र के तथा स्थानीय एककों के, कृत्यों अथवा विषयों से सम्बद्ध अनुसूचियों की परीक्षा करें तो आपको विदित हो जायेगा कि स्थानीय एककों को बिल्कुल की अशक्त बनाया गया है। अपने कर्तव्यों का सुचारु रूप से निर्वहन करने के लिये न तो उनके पास शक्ति है और न धन ही। मुझ से पूर्व बोलने वाले एक वक्ता महोदय यह कह चुके हैं कि वास्तविक स्वशासन तथा लोकतंत्र केवल एककों में ही सम्भव है। केन्द्र में केवल प्रतिनिधियों के प्रतिनिधि होने चाहिये क्योंकि उसे केवल एककों की दी हुई शक्ति प्राप्त है। इस प्रकार की सरकार ही वास्तव में उत्तरदायी तथा लोकप्रिय सरकार होगी। सम्भव है कि इस समय एक ही दल का बहुमत होने के कारण, तथा उसके नेता की सुदृढ़ स्थिति के कारण आपको एक तथ्य दृष्टिगोचर न हो। वह तथ्य यह है कि जिस रूप में संविधान इस समय है उस रूप में उसके द्वारा वास्तविक व्यवहारिक लोकतंत्र का उतना विकास नहीं होगा जितना कि फासिज्म का विकास होगा। एककों की अपेक्षा केन्द्र में इसका खतरा अधिक है। संविधान में आपने राज्य के प्रधान में—जो वास्तव में नाममात्र का प्रधान होगा और प्रधान मंत्री उसके नाम पर कृत्य करेगा, शक्तियों का संकेन्द्रण किया है और इस कारण यदि प्रधानमंत्री चाहे तो वह वास्तव में एक तानाशाह हो सकता है। इस दशा में मंत्रिमंडल के सहकारी तथा संसद भी केवल उसके रजिस्ट्री के दफ्तर का रूप धारण कर लेगी।

इस संविधान में जो जो सम्भावनायें सन्निहित हैं उनका विचार करके मैं कांप उठता हूं। मुझे आशा है कि जिस रूप में मैं इन सम्भावनाओं के चरितार्थ होने की कल्पना कर रहा हूं उस रूप में ये चरितार्थ नहीं होंगी। किन्तु फिर भी मुझे यह देखकर खेद होता है कि इस संविधान में ऐसे उपबन्धों को स्थान दिया गया है जिनका सहारा लेकर राष्ट्रपति, अथवा उसके नाम पर प्रधान मंत्री, एक खतरनाक तानाशाह बन सकता हैं।

श्रीमान इस संविधान में कुछ अन्य बातें भी ऐसी हैं, कि उन्हें देखते हुए यह आशा नहीं की जा सकती कि कोई ऐसा लोकतंत्र स्थापित होने जा रहा है जो बन्धनों से मुक्त हो तथा बाहर के प्रभाव और पराधीनता से भी मुक्त हो तथा जो वर्गहीन हो और सभी को समान रूप से प्राप्त हो। श्रीमान, हम आशा करते थे कि लोगों की सम्पूर्ण प्रभुता को व्यवहार में कम से कम इस रूप में लाया जायेगा कि राज्य को सभी प्रकार के प्राथमिक उत्पादन के साधनों पर पूर्णस्वामित्व प्राप्त हो जायेगा। जब मैंने राज्य को सभी खनिजों, प्रवाहित जलों तथा अन्य ऐसी आधारभूत सम्पत्तियों को दिलाने के सम्बन्ध में संशोधन उपस्थित किया था, जिनसे मनुष्य की उन्नति की जा सकती है, तो उसका रूखा जवाब यही दिया गया कि वह व्यवहारिक नहीं है।

श्रीमान, ये उदाहरण, और कई अन्य उदाहरण भी, यह दिखलाने के लिए दिये जा सकते हैं कि जो संविधान हम पारित करने जा रहे हैं। उसमें कई सारवान विषयों के सम्बन्ध में उन आदर्शों का अनुसरण नहीं किया गया है जिनका अनुसरण किये जाने की हमें आशा थी। किन्तु फिर भी मैं यह कहने के लिये तैयार नहीं हूं कि इस संविधान को इसकी कमजोरियों तथा इसके दोषों के कारण अस्वीकार कर दिया जाये। मैं यह कहने के लिये तैयार हूं कि अनेक दोषों के होते हुये

[प्रो. के.टी. शाह]

भी हम इस संविधान को इस प्रकार व्यवहार में लाये कि इसमें सन्निहित भावना से हमारा पथप्रदर्शन हो तथा इसी की छत्रछाया में हम आगे बढ़ें। यदि इसकी कुछ कमजोरियां हैं, और इसमें कुछ दोष हैं और कुछ बातें रह गई हैं, अथवा जानबूझ कर कुछ पाप किये गये हैं, तो व्यवहार में वे प्रकाश में आ जायेंगे यदि हम उसे यथोचित भावना से व्यवहार में लायें और शुद्ध बुद्धि से व्यवहार में लायें, और केवल लोक कल्याण की भावना से ही प्रेरित हों तो मुझे विश्वास है कि दोषों तथा कमजोरियों के होते हुए भी इस संविधान को इस प्रकार कार्यान्वित किया जा सकता है कि थोड़े ही समय में वास्तविक लोकतंत्र स्थापित हो जायेगा और यदि निकट भविष्य में नहीं तो पांच या दस वर्षों में यहां के लोग अपने देश के वास्तविक शासक हो जायेंगे।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने इस संविधान को तृतीय पठन में पारित करने के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव उपस्थित किया है उसका सहर्ष अनुमोदन करने के लिये मैं आगे बढ़ा हूं। श्रीमान, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं आरम्भ में कुछ निजी बातें कहना चाहता हूं। श्रीमान, आपको विदित है कि मेरा जन्म सिंध में हुआ था। अपने युवा काल में बत्तीस वर्ष तक मैं लोकसेवा का कार्य करता रहा और अपनी पूरी योग्यता से यथाशक्ति सिंध के लोगों की सेवा करता रहा। जब ब्रिटिश मंत्रिमंडल ने यह घोषणा की कि संविधान के निर्माण के लिये एक संविधान सभा स्थापित की जानी चाहिये तो सिंध को एक स्थान दिया गया। मेरी इच्छा थी कि मैं संविधान सभा में आकर सेवा करता किन्तु मेरे मित्र भी जेरामदास दौलतराम मनोनीत किये गये। श्रीमान, मैं अपने नेता माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल तथा माननीय मौलाना अबुल कलाम आजाद का आभारी हूं, जिन्होंने मुझे संविधान सभा में आने के लिये प्रोत्साहित किया। उन्होंने मेरे लिये मध्य प्रान्त और बरार का निर्वाचन क्षेत्र ढूंढ निकाला। मौलाना साहिब ने मुझे एक पत्र सेठ गोविन्द दास के नाम से दिया और उन्होंने तथा पंडित रविशंकर शुक्ल ने मुझे मध्य प्रान्त और बरार से एकमत से निर्वाचित करा दिया। इस अवसर पर मैं सेठ गोविन्द दास तथा पंडित रविशंकर शुक्ल को और मध्य प्रान्त की विधान सभा के सदस्यों को मुझे इस संविधान सभा में भेजने तथा इसके कार्य में अपना योग देने का अवसर देने के लिये धन्यवाद देता हूं। श्रीमान, इस प्रकार मुझे इस संविधान के निर्माण में अपना थोड़ा-सा योग देने और भारत की नागरिकता प्राप्त करने का अवसर मिला जिसकी मुझे हमेशा आकांक्षा रही और जिसे स्वीकार करने का मुझे गर्व है। देश के विभाजन के पश्चात् इस सभा में मुझे अपने स्थान से हटाने के लिये कुछ प्रयत्न इस कारण किया गया कि मैं सिंध का निवासी था। श्रीमान, आपने विधि का सही निर्वचन किया और कहा कि मैं भले ही सिंध का निवासी क्यों न हूं, यद्यपि मैं आज नहीं हूं। किन्तु मध्य प्रान्त से निर्वाचित समझा जाऊंगा।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** मैं आशा करता हूं कि यह आखिरी बार ही होगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** आपने विधि का ठीक निर्वचन किया और सभा में यह घोषित किया कि मेरा निर्वाचन वैध है। श्रीमान, मैं आपको धन्यवाद देता हूं। आपने कोई पक्षपात नहीं किया बल्कि ठीक ही कदम उठाया।

संविधान के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि 6 दिसम्बर 1946 को इस सभा में अर्थात् इस ऐतिहासिक हाल में प्रवेश करने के पूर्व जिसका विशेषत: इस संविधान

को बनाने के लिये नवनिर्माण किया गया है हम कुछ मित्र आपस में साधारणतः इस सम्बन्ध में चर्चा कर रहे थे कि किस प्रकार का संविधान बनाया जायेगा और उसे बनाने में कितना समय लगेगा। श्रीमान, इस सभा के एक प्रख्यात सदस्य ने, जिन्होंने बाद को पदत्याग कर दिया था, मुझसे कहा कि अंग्रेज भारत नहीं छोड़ने जा रहे हैं और यह संविधान वास्तव में एक द्वितीय नेहरू प्रतिवेदन होगा। एक अन्य माननीय मित्र सेठ गोविन्द दास ने मुझसे कहा कि उसे बनाने में छः महीने लगेंगे। मैंने कहा कि इसे बनाने में कम से कम दो वर्ष लगेंगे।

***श्री महावीर त्यागी:** आपने ठीक कहा था।

***श्री आर.के. सिधवा:** आज हम देखते हैं कि तीन वर्ष बीत चुके अथवा यों कहिये कि 15 दिन कम तीन वर्ष बीत चुके हैं, और अब हम संविधान को पूरा करने जा रहे हैं। 9 दिसम्बर, 1946 से लेकर 1947 तक विचार-विमर्श करने के पश्चात् 1 फरवरी 1948 को हमें संविधान का मसौदा दिया गया। उसमें संविधान के 313 अनुच्छेद थे। आज इस सभा में 395 अनुच्छेद प्रस्तुत किये गये हैं, अर्थात पहले के मसौदे में 82 नवीन अनुच्छेद और जोड़ दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त लगभग 220 पुराने अनुच्छेदों को बिल्कुल मिटा ही दिया गया है और लगभग 120 अनुच्छेदों की शब्दावलि में सारवान परिवर्तन किया गया है। यद्यपि प्रस्तावना का एक शब्द और एक विराम भी नहीं बदला गया है किन्तु बहुत से अनुच्छेद बदल दिये गये हैं। मुझे इसकी प्रसन्नता है और सभा को भी इसकी प्रसन्नता है कि हमने अपने अनुभव के आधार पर यह विचार किया कि हमें संविधान जल्दी में नहीं तैयार करना चाहिये। इसलिये यदि कुछ अधिक समय लेकर हमने संविधान तैयार किया है तो हमने ठीक ही किया है, विशेषतया जब कि वह एक ऐसा संविधान है जिसपर हम सब गर्व करेंगे। इस सभा के बाहर यह आलोचना की गई है कि हमने अधिक समय लिया और और कुछ धन नष्ट किया है। मुझे उस की कोई भी परवाह नहीं है। यह भी कहा गया था कि हम संशोधनों को केवल इस लिये भेज रहे हैं कि हमें उन्हें उपस्थित करना है और भाषण देने हैं। हमने न तो इस प्रकार के तर्कों को सुना और न उनकी परवाह ही की। हम अपना मत व्यक्त करने के लिये इस संविधान सभा में संघर्ष कर रहे थे। और हमने सुन्दर ढंग से संघर्ष किया। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि मसौदा समिति ने हमारे संघर्ष को यथोचित दृष्टि से देखा। हमने अपना कर्तव्य पूरा कर लिया है। आने वाली पीढ़ियां इस सभा की कार्यवाही के प्रतिवेदन को देख सकती हैं और इतिहासकार इसका निर्णय कर सकते हैं कि हमने समय नष्ट किया अथवा इस देश के लोगों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन किया और एक ऐसे संविधान का निर्माण किया जिस पर हम सब को गर्व है और मुझे भी बहुत गर्व है।

इस संविधान का एक उज्ज्वल अंग इसका नागरिकता-सम्बन्धी भाग है। देश के विभाजन के पश्चात् नागरिकता की परिभाषा करना एक पेचीदा प्रश्न हो गया था। मसौदा-समिति तथा अन्य लोगों ने इस ओर ध्यान दिया और इसे हल करने के लिये वे बधाई के पात्र हैं। विस्थापित लोगों से सीधे सीधे यह कहा गया है कि यदि उनके माता-पिता ने भी भारत में जन्म लिया हो तो वे स्वतः भारत के नागरिक हो जायेंगे।

जहां तक मूलाधिकारों का सम्बन्ध है, उनकी अनेक आलोचनाएं की गई हैं, किन्तु सभी बातों को ध्यान में रखकर मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं, और मैं यह पहले कई बार बता भी चुका हूं, कि वाक्-स्वातंत्र्य अथवा अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य

[श्री आर.के. सिधवा]

का यह अर्थ नहीं है कि कोई व्यक्ति मनमाने ढंग से बोले और ऐसी बातें भी कहे जिन से हमारी स्वतन्त्रता की हानि हो। लोकतंत्रात्मक देशों में यह सभी जानते हैं कि मेरे माननीय मित्र प्रोफेसर शाह अभी 'लोकतंत्र' की आलोचना कर रहे थे। मैं निवेदन करना चाहता हूं कि लोकतंत्र का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति जो भी करना चाहे करे। इसलिये यदि मूलाधिकार-विषयक कुछ अनुच्छेदों में कुछ निर्बन्धन रखे गये हैं तो वह इस लिये कि इसकी आवश्यकता थी, भले ही हमें यह नापसन्द हो। उनमें से कुछ मुझे भी नापसन्द हैं। मैं यह चाहता हूं कि मैं बिल्कुल ही स्वतन्त्र व्यक्ति रहूं किन्तु मुझे कुछ परिसीमाओं के अधीन कार्य करना है। इन मूलाधिकारों को प्राप्त करके हम किसी भी व्यक्ति से कह सकते हैं कि हमारे अधिकार ये हैं और यदि किसी समय कोई व्यक्ति हमारे अधिकारों को कुचलना चाहे तो हम उच्चतम न्यायालय में केवल आवेदन-पत्र देकर न्याय करा सकते हैं। आप इस संविधान में इससे अधिक और क्या चाहते हैं?

इस संविधान का एक अन्य उज्जवल अंग इसका वयस्क-मताधिकार-विषयक भाग है। इस संविधान सभा ने वयस्क मताधिकार प्रदान करके बहुत बड़ा खतरा उठाया है। मैं सभा से निवेदन करता हूं कि बहुत बड़ा खतरा इस कारण हो सकता है कि हमारे 85 प्रतिशत लोग निरक्षर हैं और अभी भी यह संदिग्ध है कि वयस्क मताधिकार की व्यवस्था सफल होगी या असफल। श्रीमान, चाहे जो भी हो, चाहे वह सफल हो या असफल, हमने यह खतरा सोच समझ कर ही उठाया है। हमें यह खतरा उठाना था और हमने इसे उठाया है। बिना वयस्क मताधिकार के लोकतन्त्र का कोई भी अर्थ नहीं होगा। इसलिये मुझे इसकी बहुत प्रसन्ता है, और सभा को इसका गर्व है कि हमने इस संविधान में "वयस्क मताधिकार" की व्यवस्था की है। इस सभा के बाहर कुछ आलोचकों ने हमारे कार्य की आलोचना की है और कहा है कि हमने एकाधिपत्य प्राप्त किया है और हम यहां हमेशा के लिये इसी स्थिति में बने रहना चाहते हैं। यदि संविधान सभा की यह इच्छा होती तो हम मताधिकार की व्यवस्था अन्य प्रकार करते। किन्तु हमने यह विचार किया है कि चाहे जो भी हो "वयस्क मताधिकार" की व्यवस्था करनी ही है क्योंकि पिछले पचास वर्षों से कांग्रेस घोषणा करती चली आ रही है कि जब कभी स्वतन्त्रता प्राप्त होगी 18 अथवा 21 वर्ष की आयु के प्रत्येक स्त्री और पुरुष को मत देने का अधिकार होगा। मेरे विचार से यह सबसे बड़ा अधिकार है। *(विघ्न)*। 21 वर्ष की आयु रखी गई है। मेरी इच्छा थी कि 18 वर्ष की आयु रखी जाती किन्तु 21 वर्ष की आयु रखी गई है। इस अधिकार को आने वली पीढ़ियों ने ठीक ढंग से प्रयोग में लाना है। यह देखना है कि विभिन्न विधान मंडलों के सदस्यों को निर्वाचित करने में वे अपने अधिकार को किस प्रकार प्रयोग करते हैं। यह कहा जाता है कि भावी विधान-मंडलों में निरक्षर लोगों का बाहुल्य रहेगा। यदि भारतीय संघ के सुदूर भागों से निरक्षर लोग ही आयेंगे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। मैंने देखा है कि कई निरक्षर लोगों में इतनी मौलिकता होती है कि वे हममें से कई साक्षर लोगों से अच्छा तर्क उपस्थित करते हैं। इस लिये मुझे कोई भय नहीं है और मैं समझता हूं कि हमने सही रास्ता अपनाया है। यदि कुछ खतरा है, और मैं जानता हूं कि खतरा है, तो हमने उसे जानबूझ कर उठाया है।

मुझे वास्तव में खेद है कि स्थानीय निकायों के सम्बन्ध में यह संविधान मौन है। मौन इस अर्थ में है कि उन्हें वह अधिकार नहीं दिया गया है जिसके दिये जाने की हमें आशा थी। हमारी यह आकांक्षा है कि प्रत्येक गांव तथा प्रत्येक गांव वाला सुसम्पन्न तथा आत्मनिर्भर हो। हमारे महान नेता महात्मा गांधी ने अपने सामने "देहाती स्वराज" का आदर्श रखा था और वे यह चाहते थे कि प्रत्येक गांव आत्मनिर्भर तथा आत्म सेवी हो। श्रीमान, मैं खेद के साथ कहता हूं कि इस संविधान में इस आदर्श का सन्निवेश नहीं है। इस उद्देश्य से मैंने कई संशोधन उपस्थित किये थे किन्तु मुझे खेद है कि मसौदा-समिति उन्हें स्वीकार नहीं कर सकी।

जैसा कि मैंने पिछले किसी दिन कहा था, आरम्भ में जब हम लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव पर विचार-विमर्श कर रहे थे तो इस समय पूरी सभा का यह मत था कि केन्द्र शक्तिशाली होना चाहिये। इसलिये मसौदा-समिति का यही दृष्टिकोण रहा। मैं यह नहीं कहता कि प्रान्तों के केवल कंकाल खड़े किये गये हैं। उन्हें बहुत सी शक्तियां दी गई हैं और केन्द्र को शक्तिशाली बनाया गया है। मैं इसके पक्ष में हूं किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि गांवों को सशक्त तथा आत्मनिर्भर नहीं बनाया जाये। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि विभिन्न प्रान्तीय सरकारों ने पंचायत सम्बन्धी विधियां बनाई हैं। बम्बई सरकार ने बम्बई पंचायत अधिनियम पारित किया है, मध्य प्रदेश ने जनपद अधिनियम पारित किया है, संयुक्त प्रान्त की सरकार ने गांव पंचायत अधिनियम पारित किया है और बिहार सरकार ने ग्रामीण पंचायत राज अधिनियम पारित किया है। ये सब अधिनियम हैं। किन्तु यदि आप इन प्रदेशों को अपेक्षित धन नहीं देंगे तो वे आखिर करेंगे क्या? मुझे खेद है कि गांवों को राष्ट्रीय वित्त का जो भाग वहां के प्रशासन के लिये तथा उनके आत्मनिर्भर होने के लिये मिलना चाहिये वह उन्हें नहीं मिल रहा है। प्रान्त गांवों को उन का यथोचित भाग नहीं देते हैं। देश में, मैं कहूंगा कि इस समय स्थानीय निकायों का एक स्वांग ही दिखाई देता है। मुझे आशा है कि, चाहे संविधान कैसा ही क्यों न हो प्रान्तीय सरकारें गांवों को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करेंगी। जब तक हम गांवों को आत्मनिर्भर नहीं बनायेंगे तब तक साधारण नागरिक न तो सुखी हो सकेगा और न सम्पन्न भले ही हम उसका सम्मान करते हों।

श्रीमान, इस संविधान का एक अन्य उज्ज्वल अंग यह है कि इसके द्वारा साम्प्रदायिकता को समाप्त कर दिया गया है। आरम्भ में हमें यह भय था कि हम से यह कहा जायेगा कि हम अल्पसंख्यक वर्गों के प्रति उदारता नहीं दिखा रहे हैं। इस लिये संविधान के पुराने मसौदे में, जिसे 1 फरवरी 1948 को सभा में उपस्थित किया गया था, हमने साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे थे। मेरा समुदाय एक अल्पसंख्यक समुदाय है। मेरा अपने जीवन पर्यन्त यही विचार रहा है कि अल्पसंख्यकों का प्रश्न हमारे राजनैतिक जीवन के लिये क्षय रोग तथा विष के समान है। बाद को इस सभा ने यह अनुभव किया कि साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की विभिन्न व्यवस्थाओं को समाप्त कर देना चाहिये और वे समाप्त कर दी गई हैं। वह एक शुभ दिन था जब अल्पसंख्यक समिति के सभापति, सरदार पटेल के प्रयत्नों के फलस्वरूप संविधान में जिस साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई थी उसे समाप्त कर दिया गया। आज हम जिस संविधान को देश को तथा

[श्री आर.के. सिधवा]

संसार को प्रदान कर रहे हैं उसके किसी भी अनुच्छेद में साम्प्रदायिकता का लेशमात्र भी नहीं है। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के सम्बन्ध में मैं अपने विचार व्यक्त कर चुका हूं। मेरे विचार से उनका साम्प्रदायिक समुदाय नहीं है। मेरे विचार से वह हिन्दू समुदाय का ही एक वर्ग है जिसके सम्बन्ध में हमारे महान नेता, आदरणीय महात्मा गांधी का यह मत था, और उनका यह मत ठीक ही था, कि उसके प्रति बहुत अन्याय किया गया है। यद्यपि मैं पारसी हूं किन्तु मुझे हरिजन सेवक संघ के मंत्री की हैसियत से कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त रहा है। मैं यह दावे के साथ कह सकता हूं कि उनके प्रति वास्तव में बहुत अन्याय किया गया है। हमने यह उचित ही किया है कि उन के लिये विशेषाधिकारों की व्यवस्था की है। मुझे विश्वास है कि संविधान आरम्भ होने के पश्चात् दस वर्ष के भीतर ही यह वर्ग भी अन्य लोगों के स्तर तक पहुंच जायेगा और ये अनुसूचित जातियां दस वर्ष पश्चात् स्वतः समाप्त हो जायेंगी।

श्रीमान, न्यायपालिका पर कार्यपालिका का कोई भी प्रभाव न पड़ने देने के लिये इस संविधान में प्रत्येक प्रयत्न किया गया है। मैं पूछता हूं कि आप और चाहते क्या हैं? हम ने बहुत यत्न से यह व्यवस्था की है कि चाहे कार्यपालिका का कितना ही अधिक प्रभाव क्यों न हो उसका न्यायपालिका से कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये ताकि नागरिकों को उनके अधिकार तथा विशेषाधिकार पूर्ण रूप से प्राप्त हों और उनकी रक्षा हो सके। मेरा केवल यह निवेदन है कि कभी न्यायाधीश भी बहुत अहंकारपूर्ण दिखाई देते हैं। जब हमने उन्हें पूर्ण प्रभुत्ता प्रदान की है तो उन्हें भी अहंकारपूर्ण नहीं होना चाहिये। यदि उनके निर्णयों की आलोचना की जाती है तो वे न्यायालय अपमान का अभियोग लगाकर कार्यवाही करते हैं, मुकदमा चलाते हैं और स्वयं निर्णय करते हैं। इस सम्बन्ध में मैंने एक संशोधन उपस्थित किया था किन्तु मुझे खेद है कि वह अस्वीकार कर दिया गया। जब न्यायाधीश यह कहते हैं कि कार्यपालिका तथा न्यायपालिका का पृथक्करण होना चाहिये तो उन्हें यह न कहना चाहिये कि अमुक समाचार-पत्र ने अथवा अमुक व्यक्ति ने न्यायालय का अपमान किया है। उन्हें उनके खिलाफ मुकदमा नहीं चलाना चाहिये जब कि वे स्वयं ही उनका निर्णय करेंगे। ऐसी प्रक्रिया के सम्बन्ध में हमने कभी सुना नहीं। मैं आशा करता हूं कि उच्चतम न्यायालय से लेकर निचले न्यायालयों तक के भावी न्यायाधीश इस सम्बन्ध में उदारता का परिचय देंगे और उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालयों के सामने यह उदाहरण रखेगा कि उन्हें अब न्यायालय-अनुमान के सम्बन्ध में पहले के समान व्यवहार नहीं करना है।

भाषा के सम्बन्ध में, हमें कितना गर्व है? कुछ लोग कहते हैं कि अंग्रेजी ही रहने दी जाये और किसी अन्य भाषा को नहीं अपनाया जाये। जिस देश की अपनी भाषा न हो वहां लोकतन्त्र कभी भी स्थापित नहीं हो सकता। भाषा का प्रश्न बहुत पेचीदा प्रश्न था और इस प्रश्न को ले कर कभी बड़ा संघर्ष भी होता था। सभा ने एकमत से यह निर्णय किया है कि हमारी भाषा हिन्दी होगी और हमें इसका गर्व है। सब ही हम प्रादेशिक भाषाओं को भी नहीं भूले और हमने उन्हें भी रहने दिया है।

इस संविधान के सम्बन्ध में निर्णय इतिहास का ही होगा। यह निश्चित है कि यह सर्वगुणसम्पन्न नहीं है। इसमें कुछ दोष भी हो सकते हैं और मैं जानता हूं

कि इसमें दोष है। मैंने आपको बताया था कि इस सभा में संशोधन उपस्थित करके मैंने संघर्ष किया था किन्तु मेरे संशोधन गिर गये। किन्तु मैं समझता हूं कि यह मेरा कर्तव्य है कि मैं लोगों को बताऊं कि यह एक सर्वोत्कृष्ट संविधान है और मैं आशा करता हूं कि संविधान सभा का प्रत्येक सदस्य भिन्न मत रखते हुए भी यह कहेगा कि हमें इस संविधान पर गर्व है और हमें संसार को यह बता देना चाहिये, और संसार इसे समझेगा भी कि संसार के विभिन्न देश इस संविधान से सीख ले सकते हैं। इस लिये जब 26 जनवरी 1950 के ऐतिहासिक दिवस को, जब हम सम्पूर्णप्रभुत्व-सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक राज्य की स्थापना करेंगे तो उस दिन अवश्य ही मैं इस संविधान से गर्वान्वित हूंगा। संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों का बहुत प्रचार हुआ है। इस प्रचार की आवश्यकता भी थी क्योंकि अब प्रत्येक व्यक्ति जान गया है कि संविधान क्या है और इसके अनुच्छेद क्या हैं। दो वर्ष पूर्व जब हमने अपना कार्य आरम्भ किया था तो लोग यह बिल्कुल नहीं जानते थे कि आखिर यह संविधान है क्या चीज। किन्तु संविधान सभा की बैठकों को तथा उसके सत्रों को अधिक काल तक करने से लोग विभिन्न अनुच्छेदों को समाचारपत्रों में पढ़ते हैं और बड़ी दिलचस्पी से उनके सम्बन्ध में विचार-विमर्श करते हैं यद्यपि समाचारपत्रों में केवल सारांश ही निकलता है क्योंकि वे पूर्ण विवरण नहीं दे सकते। लोग आज इस संविधान पर तथा इसके अनुच्छेदों पर, जिनसे उन्हें अपने अधिकार तथा आभार प्राप्त हो रहे हैं, बहुत दिलचस्पी ले रहे हैं।

अन्य में श्रीमान, मेरा निवेदन है कि इस संविधान के एक अनुच्छेद में यह कहा गया है कि सदस्यों को वही अधिकार तथा विशेषाधिकार प्राप्त होंगे जो कामन्स-सभा के सदस्यों को प्राप्त हैं। मैं, मसौदा-समिति से यह जानने के लिये कि कामन्स-सभा के क्या विशेषाधिकार हैं, अपनी जगह से कई बार उठा किन्तु उसके किसी सदस्य को यह ज्ञात नहीं था और न उनमें से किसी ने मुझे बताया। जब मैंने मसौदा-समिति के सभापति डॉ. अम्बेडकर से बार-बार यह प्रश्न पूछा तो उन्होंने कहा कि मेरे पास दक्षिणी अफ्रीका की संसद के कुछ विशेषाधिकारों का विवरण है और मैं उसे आपको दिखा सकता हूं। मैंने उसे मेरे पास भेज देने के लिये उनको लिखा है कि मुझे अभी तक न तो कोई उत्तर मिला है और न विशेषाधिकारों का विवरण ही। मैं कह नहीं सकता कि वह उनके दफ्तर में उपलब्ध है या नहीं, किन्तु मुझे उसकी एक प्रति नहीं दी गई है। मैं वास्तव में यह जानने के लिए उत्सुक हूं कि वे विशेषाधिकार क्या हैं। संविधान का यह उपबन्ध बहुत ही अस्पष्ट है कि सदस्यों को वही अधिकार तथा विशेषाधिकार प्राप्त होंगे जो कामन्स सभा के सदस्यों को प्राप्त हैं जब कि मसौदा-समिति को स्वयं ज्ञात नहीं है कि वे क्या हैं? संविधान में इस प्रकार का उपबन्ध नहीं रखना चाहिये था। चाहे जो भी हो, इस आशय का उपबन्ध रखा गया है किन्तु मुझे आशा है कि संसद के पहले सत्र में ही सदस्यों के अधिकारों को प्राप्त करने के लिये तथा उनकी रक्षा करने के लिये प्रयत्न किये जायेंगे।

श्रीमान, अन्त में मैं केवल यह कहूंगा कि अपने महान नेता से प्रेरणा प्राप्त करके, जिनका चित्र आपके स्थान के ऊपर टांगा गया है, हमने इन अनुच्छेदों पर विचार-विमर्श किया। यद्यपि वे हमारे बीच में सशरीर उपस्थित नहीं हैं किन्तु मुझे विश्वास है कि इस संविधान के विधि-रूप में प्रवर्तन में आने पर उनकी आत्मा

[श्री आर.के. सिधवा]

हमारा पथप्रदर्शन करेगी और हम सत्यनिष्ठा से तथा वफादारी से कार्य करेंगे और वे अपने जीवन भर हमें जो सीख देते रहे उसका सत्यनिष्ठा तथा वफादारी से अनुसरण करेंगे।

***प्रोफेसर एन.जी. रंगा** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे इसकी बहुत प्रसन्नता है कि इस सभा को दो वर्ष से अधिक समय के अपने जीवन-काल में जो शुभ दिवस प्राप्त हुए उनमें से आज का दिन भी एक है: एक समय वह था जब इस सभा को हमारे प्रधान मंत्री तथा उपप्रधान मंत्री तथा अन्य नेताओं के भाषणों से बहुत प्रेरणा प्राप्त होती थी। आज का दिन भी एक शुभ दिवस है क्योंकि आज हमें इसका हर्ष है कि आज स्वतन्त्र भारत के स्वप्न पूरे हो रहे हैं और भारत के भावी संविधान का निर्माण करके हम एक महान कार्य सम्पन्न करने जा रहे हैं। एक अन्य अर्थ में भी यह एक शुभ दिवस है क्योंकि इस सभा के तथा आपके आशीर्वाद से और हमारे दो महान राष्ट्रीय नेता, अर्थात पंडित जी और सरदार जी की शक्ति तथा प्रेरणा से और उनके समर्थन से इस संविधान सभा के विचार-विमर्श के फलस्वरूप एक नवीन प्रान्त अस्तित्व में आ रहा है। सौभाग्य से मैं आंध्र से हूं और मुझे अपने दो महान नेताओं, अर्थात केसरी श्री प्रकाशम तथा हमारे राष्ट्रपति डॉ. पट्टाभि के साथ आंध्र प्रान्त को अस्त्वि में लाने के लिये प्रयत्न करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आज हमें यह सुसंवाद प्राप्त हुआ है कि कांग्रेस कार्यकारिणी समिति हमारी सरकार से यह प्रार्थना करने के लिये सहमत हो गई है कि वह आंध्र प्रान्त को अस्तित्व में लाने के लिये कदम उठाये। इस प्रान्त को अस्तित्व में लाने के लिये आंध्र तथा अन्य लोग पिछले 35 या 36 वर्षों से संघर्ष करते चले आ रहे हैं। मुझे केवल यह खेद है कि इस आन्दोलन के प्रवर्तक तथा किसी समय भारतीय कांग्रेस के स्थानापन्न राष्ट्रपति और इस देश के महान शहीद देशभक्त कोंडा वेंकटापय्या आज इस सुसंवाद को सुनने के लिये जीवित नहीं हैं। मुझे पूरी आशा है कि सरकार, तथा आप भी हमारे अध्यक्ष होने के नाते इस प्रान्त को अस्तित्व में लाने के लिये भारत-शासन अधिनियम की धारा 290 के अधीन तथा बाद को संविधान की तत्विषयक धारा के अधीन आवश्यक कदम उठायेंगे और इस देश के राज्यों के बीच सुचारू रूप से अपना कार्य आरम्भ करने के लिए उसकी पूरी सहायता करेंगे और स्वतन्त्र भारत की उन्नति में अपना योग देने के लिये उसे समर्थ बनायेंगे।

इस सभा के विचाराधीन जो संविधान है उसके बारे में मेरा निवेदन है कि मुझे इसकी प्रसन्नता है कि कई विषयों के सम्बन्ध में इस संविधान सभा ने संसार के सामने एक उदाहरण रखा है। हमें आज ही यह समाचार विदित हुआ कि अमरीका के राष्ट्रपति मि. ट्रुमैन अपने देशवासियों को इसके लिये राजी करने का प्रयास कर रहे हैं कि वे उस देश के हबशियों को, जो उस देश की जनसंख्या के दस प्रतिशत हैं, नागरिक अधिकार प्रदान करें। अपने संविधान द्वारा हमने यह अधिकार हरिजनों तथा अन्य अनुसूचित जातियों तथा पिछड़ी हुई आदिम-जातियों को प्रदान किये हैं। हमने अस्पृश्यता को पहले अपने मस्तिष्क से हटाया और फिर अपने समाज से। इस सम्बन्ध में हम सभी सहमत हो गये हैं कि अस्पृश्यता का अन्त किया जाये अैर जो कोई उसे बरते उसे दण्डित किया जाये। हम इसके लिये भी राजी हो गये हैं कि अनुसूचित जातियों की रक्षा की जाये। मेरे मित्र श्री मुनिस्वामी

पिल्ले का विचार है कि इन जातियों के लोग दस वर्ष में भी उन्नति नहीं कर सकेंगे और देश को दस वर्ष के पश्चात् रक्षणों को समाप्त नहीं करना चाहिये। मुझे इससे अधिक आशा है। मैं इसके लिये उत्सुक हूं कि भारतीय लोकतन्त्र में लोग अनुसूचित जातियों के लोगों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन इतने संतोषजनक ढंग से करें कि दस वर्ष के पश्चात् अनुसूचित जातियों के हमारे मित्र अन्य लोगों के साथ घुल-मिल जाने के लिये तथा इन रक्षकों को समाप्त करने के लिए स्वयं तैयार हो जायें।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, इस संविधान द्वारा संसार के साम्राज्यवादी देशों के सामने तथा आदिम-जातियों के लोगों के सामने विशेषकर अफ्रीका के ऐसे लोगों के सामने हमने अपने देश की आदिम-जातियों के लोगों के लिये रक्षण रखकर एक आदर्श रखा है। यह सभी को विदित है कि हमारा देश एक प्राचीन देश है और यहां प्राचीन काल के बहुत से भग्नावशेष पड़े हुए है जिन्हें दूर करने की आवश्यकता है। हम उन्हें बिना समझे बूझे नहीं दूर कर सकते हैं। हमें रचनात्मक कदम उठाने हैं और विचार यह है कि संविधान के अधीन रचनात्मक कदम उठाये जायेंगे। हम इसके लिये सहमत हो गये हैं कि आसाम के सुदूर प्रदेशों में आदिम-जातियों के स्वायत्तशासी गणराज्य स्थापित कर दिये जायें ताकि आदिम-जातियों के लोग अपनी जातियों का सामाजिक जीवन ही व्यतीत न कर सकें बल्कि राजनैतिक जीवन भी व्यतीत कर सकें और वह भी इस प्रकार कि उनकी शीघ्र उन्नति हो सके। हमने अभी लोगों के सामने एक उदाहरण रखा है क्योंकि हम सभी जानते हैं कि अंग्रेज़, बेल्जियन, फ्रांसीसी तथा अन्य साम्राज्यवादी, जो अभी तक अफ्रीका के लोगों पर अपना अधिपत्य जमाये हुए थे आज इस सम्बन्ध में बड़ी कठिनाई का सामना अनुभव कर रहे हैं कि वे अपने साम्राज्य में आदिम-जातियों के लोगों की किस प्रकार सहायता करें कि वे शीघ्र उन्नति कर सकें। यह हम सभी को विदित है कि इन देशों के आदिम जातियों के लोग केवल पूर्ण स्वातंत्र्य प्राप्त करने के लिये ही नहीं किन्तु अपने सामाजिक उत्थान के लिये शीघ्र उन्नति करना चाहते हैं और इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये राजनैतिक साधनों को प्राप्त करना चाहते हैं। मेरी यह धारणा है कि वे उसी मार्ग का अनुसरण करके उन्नति कर सकते हैं जिस मार्ग को हमने इस अध्याय में अपने देश की आदिम-जातियों के लोगों के लिये प्रशस्त किया है।

श्रीमान, कई देशों ने धार्मिक सामंजस्य के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहा और इस कारण उनका इतिहास बहुत संकटपूर्ण रहा। कनाडा, इंग्लैंड तथा फ्रांस में ईसाइयों के दो सम्प्रदायों में संघर्ष रहा और कई वर्षों तक इसका सामंजस्यपूर्ण हल नहीं निकाला जा सका कि ये संप्रदाय अपने सिद्धान्तों की शिक्षा किस प्रकार दें और उनका प्रचार किस प्रकार करें ताकि इनके अनुयायी उन्नति करें और सुचारू सामाजिक जीवन व्यतीत करें। अपने देश में भी हमें अपने कुछ धर्मों के अनुयायियों के हितों तथा धर्मपरिवर्तन की भावनाओं में सामंजस्य लाना पड़ा। हमारे देश में कई अन्य देशों की अपेक्षा अधिक धर्म हैं किन्तु फिर भी हमने एक हल ढूंढ निकाला है और मुझे विश्वास है कि संसार के सभी संविधान-वेत्ता तथा समाज-शास्त्र-वेत्ता इसे प्रगतिशील सामंजस्यपूर्ण तथा उपयोगी घोषित करेंगे। पुराने राष्ट्रमंडल तथा वर्तमान राष्ट्रसंघ को तथा विभिन्न देशों के लोगों को द्वि-भाषा भाषी क्षेत्रों के प्रश्न को हल करने में भी बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा है और अपने अल्पसंख्यकों से उनके हितों तथा कलहों से संघर्ष करना पड़ा है। हमने अपने देश में एक ऐसा हल ढूंढ निकाला है जो प्रगतिशील है और जो एक ही क्षेत्र में रहने वाले

[प्रोफेसर एन.जी. रंगा]

अथवा विभिन्न प्रान्तों के विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले विभिन्न लोगों के बीच सामंजस्य पूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। श्रीमान, मुझे इसकी प्रसन्नता है कि केन्द्रीय सरकार को द्विभाषी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को अपने बच्चों को अपनी भाषाओं में ही शिक्षा देने की स्वतन्त्रता प्रदान करने की शक्ति दी गई है। साथ ही वे जिस प्रान्त अथवा राज्य में रहते हों वहां की सेवाओं में नियुक्त हो सकते हैं, विधान-मंडलों में तथा वहां के राजनैतिक जीवन में भाग ले सकते हैं।

श्रीमान, जैसा कि आपने अपने सुन्दर शब्दों में कहा है यह भी एक अच्छी बात हुई है कि हम सभी लोगों के लिये एक भाषा के सम्बन्ध में निर्णय कर सके हैं, सभी लोगों को एक सशक्त, सुगठित तथा सामंजस्यपूर्ण राष्ट्र में परिणत करने की ओर यह इस देश का सबसे बड़ा रचनात्मक कार्य होगा। मुझे पूरी आशा है कि हमारे बच्चों के लिये तथा उनके बच्चों के लिये इस भाषा को सीखना सम्भव ही नहीं होगा किन्तु वे अपनी तथा अपने पूर्वजों की उस प्रतिभा से, जो इस वृहत् देश की विभिन्न भाषाओं के माध्यमों से विकसित हुई है, उसे अधिक सुसम्पन्न बना सकेंगे।

हम अपने सरदार जी के बहुत आभारी हैं जिनसे हम सबको प्रेम है और जिनका हम सब आदर करते हैं और वह इस कारण कि उन्होंने हमारे देश को एक सूत्र में बांधा है और एक प्रान्त को दूसरे प्रान्त में तथा एक राज्य को दूसरे राज्य में और सबको सम्पूर्ण संयुक्त भारत में समाविष्ट किया है। उन्होंने एक ऐसी सामाजिक क्रान्ति कर दिखाई है जिस पर कोई भी देश अथवा राष्ट्र गर्व कर सकता है। यह क्रान्ति ऐसे अहिंसात्मक ढंग से तथा इतने अल्पकाल में हुई है कि यह एक अद्वितीय क्रान्ति है।

श्रीमान, हम अपने देश में लोकतंत्र की नींव डाल रहे हैं। जिस प्रकार यह नींव डाली गई है उससे मुझे इस समय संतोष है। हमने मूलाधिकारों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं। संसार के अन्य देशों ने जो अनुभव प्राप्त किया है उससे आगे हम नहीं बढ़े हैं। किन्तु साथ ही इन मूलाधिकारों का उल्लेख करते हुए हमने अपने अनुसरण के लिये अनेक आदर्श रखे हैं। एक अर्थ में हम कुछ आगे भी बढ़ गये हैं। और यह हम ने ठीक ही किया है। वह इस अर्थ में कि यदि कार्यपालिका का कोई प्राधिकारी उन अधिकारों में से किसी का खण्डन करे जिन का हम ने विवरण दिया है तो हम किसी न्यायालय के सामने जा कर न्याय करवा सकते हैं।

मुझे इसकी भी प्रसन्नता है कि हम इस सम्बन्ध में बहुत सावधान रहे हैं कि हमारे देश में उस प्रकार की घटनायें घटित न हों जैसी कि कई वर्षों तक अमरीका में घटित होती रही हैं वहां एक ओर राज्यों के बीच कलह होता रहा और दूसरी ओर राज्यों तथा फेडरल सरकार के बीच कलह होता रहा है। हमने उस देश के अनुभव से सीख ली है और राज्यों के बीच कलह न होने देने के लिये संविधान में आवश्यक उपबन्ध रखे हैं। हमने अन्तर्प्रान्तीय नहरों, खाद्य नियंत्रण तथा अनेक अन्य विषयों के सम्बन्ध में राज्यों के बीच सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किये हैं और हमें इसकी भी चिंता रही है कि हमारे देश के आर्थिक विकास में कोई एक राज्य देश के सामान्य विकास अथवा किसी पड़ौसी राज्य की प्रगति में बाधा न डाल सके।

मुझे इसकी भी प्रसन्नता है कि हमने साहस और नैतिक दृढ़ता के साथ इसे देश के ऐसे लोगों पर निर्बन्धन लगाये हैं जो एक विशेष प्रकार की स्वतन्त्रता अथवा स्वच्छन्दता का उपभोग करना चाहते थे। इसके लिये नैतिक दृढ़ता की आवश्यकता थीं। चूंकि हम में से बहुत से लोग जेल गये हैं, निरुद्ध रहे हैं, और हमने अन्य कई प्रकार के उत्पीड़न भी सहे हैं इस लिये हम जानते हैं कि इनके कारण किस प्रकार की पीड़ा सहन करनी पड़ती है। कार्यपालिका के इस प्रकार के प्राधिकार के विरुद्ध हम वर्षों से संघर्ष करते चले आये हैं। इसलिये हमने यह अनुभव किया कि इन बातों की आवश्यकता है। जो लोग थोड़े समय से ही क्रान्तिकारी थे वे तुरन्त ही अपने लक्ष्य अर्थात् स्वतन्त्रता को प्राप्त करने पर आसानी से यह अनुभव नहीं कर सकते कि यदि इस देश को उत्तरोत्तर शक्तिशाली तथा सुस्थिर होना है और यदि हमें सामाजिक उन्नति करनी है तो हमें ऐसे समूहों, दलों अथवा व्यक्तियों पर नियंत्रण रखना चाहिये जो अपने वादों के अथवा साम्प्रदायिकता के हित में तथा अपनी जाति तथा राजनीति और अपने धर्म और वर्ग के हित में अपना तथा प्रत्येक व्यक्ति का सर्वस्व बलिदान करना चाहते हैं। इसलिये इस सभा के किसी सदस्य को किसी ऐसे व्यक्ति से क्षमा याचना करने की आवश्यकता नहीं है जो यह कहे कि "आपने अमुक अमुक मूलाधिकारों पर इतने अधिक निर्बन्धन लगा दिये हैं, इत्यादि।" हमने इस सम्बन्ध में भी कार्यपालिका के प्राधिकार-प्रयोग पर परिसीमन लगाने की चिंता की है।

हमने एक अन्य दिशा में भी नैतिक दृढ़ता का परिचय दिया है और वह इस सम्बन्ध में कि हमने यह स्वीकार किया है कि एक सशक्त, सुस्थिर, सत्यनिष्ठ तथा देशभक्त लोक-सेवकों की आवश्यकता है। जब मैं एक नवयुवक था और विश्वविद्यालय में पढ़ता था तो लायड जार्ज भारत के "फौलादी ढांचे" की चर्चा करते थे जिससे मुझे बहुत क्षोभ होता था। मुझे बहुत क्रोध होता था और मैं यह विचार करता था कि आखिर यह "फौलादी ढांचा" है किस लिये। किन्तु इन तीन वर्षों में हमने अनुभव किया है कि यह हमारे लिये कितना आवश्यक है। यदि हम सहयोग के आधार पर उन्नति करना चाहते हैं अथवा गांधी की समाजवादी व्यवस्था स्थापित करना चाहते हैं तो हमें इस असैनिक सेवा की बहुत आवश्यकता पड़ेगी। यदि हमें असैनिक सेवकों को रखना है तो हमें उसका विश्वास करना होगा और उन्हें हमारा विश्वास करना होगा तथा हमें उसका सत्यनिष्ठा से समर्थन करना होगा और उसे सत्यनिष्ठा से हमारी सेवा करनी होगी। इसलिये हमारे लोक सेवकों के वेतनों तथा उपलब्धियों की रक्षा के सम्बन्ध में हमारे संविधान में जो उपबन्ध रखे गये हैं उनसे मैं सहमत हूं। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि हम अपने लोक सेवकों को मन माना अधिकार दे रहे हैं। हम असैनिक सेवकों के लिये इन विशेषाधिकारों को इसी आशा से, तथा इसी उद्देश्य से रख रहे हैं कि वे सत्यनिष्ठा से तथा योग्यता से देश की सेवा करेंगे।

श्रीमान, संविधान की एक व्यवस्था के सम्बन्ध में मुझे थोड़ा बहुत क्षोभ है। इस संविधान द्वारा हमने बहुत अधिक केन्द्रीकरण की व्यवस्था की है। यह बात नहीं है कि मैं एक सशक्त केन्द्रीय सरकार के पक्ष में नहीं हूं। हम सभी उसके पक्ष में हैं। किन्तु एक क्षण के लिये यह विचार करिये कि यदि एक हिटलर और उत्पन्न हुआ और उसने केन्द्रीय सरकार पर अधिकार जमा लिया और जो चालें जर्मनी के हिटलर ने चली थी वही चालें उसने भी चलीं और समाजवादी प्रान्तीय सरकारों को अथवा

[प्रोफेसर एन.जी. रंगा]

एक या दो उदार प्रान्तीय सरकारों को समाप्त कर दिया तो कैसी स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। हमने केन्द्रीय सरकार को कुछ ऐसी शक्तियां प्रदान की हैं जिनके आधार पर वे हमारी कुछ प्रान्तीय सरकारों को समाप्त कर सकती हैं। यह भविष्य ही बतायेगा कि यह एक सुन्दर प्रगतिशील व्यवस्था है या नहीं। यह शक्ति हमने केन्द्रीय सरकार को इसी आशा से दी है कि लोग हमेशा केन्द्र में लोकतंत्रात्मक सरकार रखेंगे और उसे साम्यवादी अथवा फासीवादी पूर्णसत्तात्मक सरकार नहीं होने देंगे।

श्रीमान, प्रान्तीय सरकारों के तथा उनके संविधान के सम्बन्ध में भी हमने लोकतंत्रात्मक आधार पर व्यवस्था की है। हमारे देशवासियों को इस व्यवस्था का आदर करने तथा इसे सुदृढ़ बनाने की चिंता करनी चाहिए। किसी संविधान का सफल होना या असफल होना देश के लोगों पर निर्भर करता है क्योंकि वही उसे आयोग में लाते हैं और अनेक प्रथाओं को स्थापित करते हैं तथा उदाहरणों को रखते हैं। क्या हमारे लोग अपने उत्तरदायित्वों का गम्भीरतापूर्वक निर्वहन करेंगे? मुझे इस का पूरा विश्वास है। मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे देशवासी, जो बहुत काल तक संकटों को झेलते हुए महात्मा गांधी के नेतृत्व में आगे बढ़ते रहे तथा जिन्होंने साम्राज्यवाद से संघर्ष किया और इस देश को स्वतंत्र किया, इस संविधान को लेकर उत्तरोत्तर प्रगतिशील तथा उत्कृष्ट लोकतन्त्रात्मक व्यवहार तथा अनुभव के लिये जिस बुद्धिमत्ता तथा राजनीतिज्ञता की आवश्यकता है उसका परिचय देंगे। मैं उस दिन की राह देख रहा हूं जब हम बापू की कल्पना का सहयोगपूर्ण राष्ट्रमंडल किसान-मजदूर-बुद्धिजीवी-कलाकार राज द्वारा स्थापित कर सकेंगे। यह राज देश के श्रमजीवियों का राज होगा न कि आलसियों का और शोषकों का राज। इस राज में श्रमजीवी समाज के उत्थान में ईमानदारी से अपना योग दे सकेंगे। यह राज उन लोगों का होगा जो लोकतन्त्र की उन्नति के लिये जीवित रहेंगे तथा कार्य करेंगे और उसकी रक्षा के लिये प्राण त्याग देंगे। उन्हें केवल लोकतन्त्र से ही प्रेम होगा और तानाशाही को पास नहीं फटकने देंगे।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, एक बार एक आदमी समुद्र-यात्रा के लिये घर से बाहर गया। बहुत समय बाद जब वह अपने गांव वापस आया तो लोगों ने उससे पूछा। आपने कौन-सा सबसे बड़ा आश्चर्य देखा है? उसने कहा कि मैंने जिस सबसे बड़े आश्चर्य का अनुभव किया है वह यह है कि मैं घर वापस चला आया हूं। इस संविधान के सम्बन्ध में सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि हमने इसे समाप्त कर दिया है। एक अन्य आश्चर्य और सम्भवत: संसार में अपने ढंग का अनूठा आश्चर्य तब दिखाई दिया जब "दूसरे" द्वितीय पठन का आविष्कार हुआ, जिसे कि हमने कल समाप्त किया है।

***एक माननीय सदस्य:** यह ढाइवां पठन है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** हो सकता है। संसार के किसी भाग के संविधान-निर्माण अथवा विधान-निर्माण के इतिहास में इस प्रकार का उदाहरण नहीं मिलता है। इस शरारत में अनजाने कुछ मेरा भी योग रहा है। आरम्भ में मैंने यह सुझाव रखा था कि द्वितीय पठन में जो कार्य हो उसे मसौदा-समिति को दुहराना चाहिये। मेरी यह धारणा थी कि जिस ढंग से हम काम कर रहे हैं उसके फलस्वरूप बहुत

सी गलतियां होने की आशंका है। इस लिये मैंने यह सुझाव रखा कि द्वितीय पठन में जब संविधान का स्वरूप निश्चित कर लिया जाये तब उसे मसौदा-समिति के पास भेजा जाये और वह उसे दुहराये। उस समय डॉ. अम्बेडकर ने उस सुझाव का बहुत विरोध किया किन्तु अन्त में वे उसे स्वीकार करने के लिए सहमत हो गये। अब हम देख सकते हैं कि वह किस प्रकार व्यवहार में लाया गया है। दुर्भाग्य से इस प्रक्रिया का परिणाम यह हुआ कि जो उपबन्ध कठिन या पेचीदे या अयुक्त समझे गये वे मसौदा-समिति के पास भेजे जाने लगे। केवल एक शर्त रखी गई और वह यह थी कि मसौदा समिति केवल रस्मी परिवर्तन करे और सदस्य इन्हीं परिवर्तनों के सम्बन्ध में संशोधन उपस्थिति करें। किसी विधान-मंडल के सचिव को जो कार्य दिया जाता है वही कार्य मसौदा-समिति को दिया गया। इसका एक अप्रत्याशित दुष्परिणाम यह हुआ कि सभा बहुत से अयुक्त उपबन्धों पर विचार नहीं कर सकीं। द्वितीय पठन में भी वे नहीं उठाये जा सके। यह उस नियम के कारण हुआ। जिसे श्रीमती दुर्गाबाई ने जारी किया। विराम, व्याकरण के दोष आदि के सम्बन्ध में तथा अन्य रस्मी संशोधनों को उठाया ही नहीं गया जैसे कि उनका कोई अर्थ ही नहीं था। उन पर मसौदा समिति ने कभी विचार नहीं किया और सभा को भी उन पर विचार करने से वंचित रखा गया। यह पठन मेरे विचार से वास्तव में चतुर्थ पठन कहा जा सकता है। संसार के सामने यह एक नया उदाहरण रखा गया है।

जो संशोधन रस्मी, व्याकरण-सम्बन्धी अथवा विराम-सम्बन्धी थे उन्हें इंग्लिस्तान की प्रथा के आधार पर नहीं उठाया गया। किन्तु इंग्लिस्तान में मसौदा-सम्बन्धी ऐसी गलतियां नहीं की जाती जैसी कि हम करते हैं। मसौदे की गलतियों का वहां प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि वे होती ही नहीं और यह कल्पना ही नहीं की जा सकती कि वे होंगी। किन्तु इस संविधान के शब्दों तथा विरामों के सम्बन्ध में हमने अंग्रेजी के व्याकरण के नियमों का मनमाना प्रयोग किया है। व्याकरण के तथा स्वरूप के दोषों की उपेक्षा की गई है जिसके कारण ऐसी गलतियां तथा अयुक्त बातें रह गई हैं जैसी कि संसार में पहले कभी नहीं देखी गईं।

मेरा निवेदन है कि इन नियमों के कारण व्यवहार में बहुत गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई हैं। कई गलतियां, अयुक्त तथा अनावश्यक बातें रह गई हैं और कई स्थलों पर उन्हीं बातों को दुहराया गया है। मैं एक उदाहरण दूंगा जिससे यह स्पष्ट हो जायेगा कि किस प्रकार उन्हीं शब्दों को दुहराया गया है। अनुच्छेद 89 के खण्ड (1) में कहा गया है: "भारत का उपराष्ट्रपति पदेन राज्य-परिषद् का सभापति होगा।" अनुच्छेद 64 में भी इन्हीं शब्दों में यही उपबन्ध रखा गया है। उसमें भी कहा गया है: "भारत का उपराष्ट्रपति पदेन राज्य-परिषद् का सभापति होगा।" इनमें से एक उपबन्ध का निकाला जा सकता था। मैंने उसे निकालने का प्रयास किया किन्तु मेरे सुझाव को इस आधार पर अनियमित ठहराया गया कि इस प्रकार जहां वही शब्द, दुहराये गये हों उन्हें मसौदा-समिति स्वयं ठीक कर लेगी। मसौदा-समिति ने इनकी उपेक्षा की है। इस प्रकार की बातें कई स्थानों पर दुहराई गई है *(विघ्न)*

***श्री आर.के. सिधवा:** गलती क्या है?

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** एक ही उपबन्ध उन्हीं शब्दों में संविधान में दो स्थलों पर प्रयुक्त है। किन्तु उसकी उपेक्षा की गई है। इस दोष को रहने दिया गया है, अब इसकी परीक्षा करने से क्या लाभ होगा।

***श्री महावीर त्यागी:** किन्तु हम आपके तर्क को समझना चाहते हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** यह गलती कहां पर हुई है?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मेरे पास इतना समय नहीं है कि सदस्य मेरी परीक्षा करें।

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्यों से मेरा निवेदन है कि वे वक्ता महोदय को अपने ढंग से बोलने दें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** संविधान में बहुत सी अयुक्त बातें तथा गलतियां रह गई हैं। मैं उनका विवरण देकर सभा को थकाना नहीं चाहता। इस सभा में जो संशोधन उपस्थित किये गये उनमें से कुछ को मसौदा-समिति ने इस कारण अस्वीकार नहीं किया कि वे अनावश्यक थे बल्कि इस कारण कि उसके सदस्यों ने कुछ शर्म और घबड़ाहट का अनुभव किया और यह विचार किया कि यदि वे उन्हें स्वीकार कर लेंगे तो उन्हें छोटा समझा जायेगा। मेरे विचार से उनका यह रुख ठीक नहीं था। कई संशोधनों को दुहराते समय चुपचाप समाविष्ट कर लिया गया और यह नहीं कहा गया है कि अमुक अुमक संशोधन स्वीकार किया गया है। मैं एक दो उदाहरण दूंगा। एक उदाहरण यह है कि संविधान में इस प्रकार की पदावलियां थी जैसे "इस संविधान का अमुक अनुच्छेद", "इस अनुच्छेद का अमुक खंड। यह मसौदा बनाने के सिद्धान्तों के विरुद्ध है कि एक सौ से भी अधिक स्थानों पर ऐसे शब्द प्रयुक्त हों जैसे "इस संविधान का अमुक अनुच्छेद", "इस अनुच्छेद का अमुक खंड" इत्यादि। इन बेकार के शब्दों की ओर मैंने बार-बार ध्यान आकृष्ट किया किन्तु मेरे सुझावों को उस समय स्वीकार नहीं किया गया। परन्तु दुहराते समय उन्हें चुपचाप समाविष्ट कर लिया गया है और यह नहीं बताया गया कि उन्हें कहां से लिया गया। यदि इसके लिये मसौदा-समिति की प्रशंसा की जाये तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि उसने कुछ सुधार किया है। इसके अतिरिक्त "इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी" पदावलि प्रयुक्त थी। मसौदा बनाने के आधुनिक सिद्धान्तों के अनुसार अंग्रेजी का "वांटेड" शब्द बेकार है। इस शब्द पर मैंने आपत्ति की थी किन्तु यह नहीं बताया गया कि किसका सुझाव स्वीकार किया गया है। इसके अतिरिक्त मैंने "इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि" पदावलि की ओर ध्यान आकृष्ट किया और कहा कि "तिथि" शब्द निकाल देना चाहिये क्योंकि इसका अर्थ सन्निहित है। मसौदा समिति ने इसे भी निकाल दिया है किन्तु इस सम्बन्ध में भी नहीं बताया है कि कौन-सा सुझाव स्वीकार किया गया है। इसके अतिरिक्त मैंने कहा कि अंग्रेजी के "जन" शब्द को बड़े अक्षर से लिखना चाहिये। यह किया गया है। "मिनिस्टर" शब्द को भी, मैंने कहा था बड़े अक्षर से लिखना चाहिये। यह भी किया गया है। इन सबको एक सौ स्थानों पर शुद्ध किया गया है किन्तु यह नहीं बताया गया है कि कौन से सुझाव स्वीकार किये गये हैं।

***एक माननीय सदस्य:** वास्तव में यह एक बहुत बड़ा परिवर्तन है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** इन छोटे-मोटे सुधारों के लिये भी हमें कृतज्ञ होना चाहिये। न्यायालयों के सम्बन्ध में मेरे सुझाव के अनुसार अंग्रेजी के शब्द "फेडरल कोर्ट" तथा "हाई कोर्ट" बड़े अक्षरों से लिखे गये हैं किन्तु छोटे न्यायालयों को मसौदा-समिति ने छोटा ही समझा है और उनके सम्बन्ध में जहां कहीं "कोर्ट" शब्द प्रयुक्त है वहां उसे छोटे अक्षर से ही लिखा गया है। उसने उस सुझाव को आंशिक रूप से ही स्वीकार किया है।

***श्री एच.जे. खांडेकरः** क्या मैं माननीय सदस्य महोदय का ध्यान घड़ी की ओर आकृष्ट कर सकता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** इस प्रकार के शब्द हमारी सभी विधियों में बड़े अक्षरों से लिखे गये हैं। "मैजिस्ट्रेट", "डिस्ट्रिक्ट जज", "असिस्टेंट मैजिस्ट्रेट" जैसे शब्दों को तथा इन्हीं के समान अन्य शब्दों को सुस्थापित प्रथा के विरुद्ध छोटे अक्षरों से लिखा गया है।

मसौदा-समिति का सबसे बड़ा दोष यह रहा है कि वह अपने विचार बदलती रही है। वास्तव में इन परिवर्तनों से सभी परिचित हैं। ये परिवर्तन प्रतिदिन किये गये और बार-बार किये गये। इसलिये इनकी चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है। इनके कारण कई अयुक्त बातें पैदा हो गई हैं।

श्रीमान, वाद-विवाद में इस दोष की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया गया कि मसौदा-समिति प्रान्तीय अधिकार-क्षेत्र में अधिकाधिक हस्तक्षेप कर रही है और उसने प्रान्तों के सभी उत्तरदायित्व तथा उनकी शक्तियां समाप्त कर दी हैं और सारी शक्ति केन्द्र को दे दी गई है। इसका परिणाम यह होगा कि प्रान्तों के उत्तरदायित्व तो रहेंगे किन्तु उन्हें शक्ति प्राप्त नहीं होगी। इससे वे अनुत्तरदाई हो जायेंगे। यही द्वैध शासन के साथ भी हुआ और वह बुरी तरह असफल रहा।

एक अन्य दोष यह है कि "राज्य" शब्द का बहुत दुरुपयोग हुआ है। संविधान में "राज्य" शब्द से विभिन्न प्रकार की संस्थायें अभिप्रेत हैं। पाठक को प्रत्येक भाग में "राज्य" शब्द की विशेष परिभाषाओं को जानना होगा ताकि वह अर्थ को ठीक-ठीक समझ सके। किन्तु फिर भी उसका सन्देह बना रहेगा। इसका कारण यह है कि मसौदा समिति केन्द्रीय, राज्यों, प्रान्तों, देशी राज्यों, जिला बोर्डों, नगरपालिकाओं, स्थानीय बोर्डों और संघीय बोर्डों के बीच विभेद नहीं कर सकी और उनके अलग-अलग नाम नहीं रख सकी। वे सब "राज्य" कहे गये हैं। इससे यह अयुक्त बात पैदा हो गई है कि जो उपबन्ध केवल केन्द्र के सम्बन्ध में प्रयुक्त होने चाहिये थे वे नगरपालिकाओं, डिस्ट्रिक्ट बोर्डों, स्थानीय बोर्डों के लिये भी प्रयुक्त किये गये हैं। इस प्रकार के वाक्य हैं जैसे "राज्य अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की उन्नति का प्रयास करेंगे", और "राष्ट्रों के बीच न्याय और सम्मानपूर्ण सम्बन्धों को बनाये रखने का प्रयास करेंगे", "राष्ट्रों के बीच अन्तर्राष्ट्रीय विधि और संधि-सम्बन्धों के प्रति आदर बढ़ाने का प्रयास करेंगे", "अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के मध्यस्थता द्वारा निबटारे के लिये प्रोत्साहन देने का प्रयास करेंगे"—जैसे कि नगरपालिकाएं, जिला बोर्ड तथा अन्य स्वायत्त-शासी स्थानीय निकाय यह सब करेंगे। अभिप्राय केन्द्र से है। बिना किसी आवश्यकता के यह विस्तृत परिभाषा रखी गई

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

है जिससे केवल भ्रम उत्पन्न होता है। यह शब्द इस कारण रखा गया है कि मसौदा-समिति चित्ताकर्षक तथा कर्णमधुर पदावलि को रखना चाहती थी। शब्दाडंबर के प्रेम के कारण ही उसने इस प्रकार की पदावलियां रखी हैं। किन्तु प्रसंगानुसार विचारों को ठीक-ठीक व्यक्त करने के लिये अंग्रेजी जैसे सुसम्पन्न भाषा में शब्द मिल सकते हैं और "सेल्फ गवर्निंग बाडीज" तथा "लोकल बाडीज" जैसी पदावलियों को केवल विशेष प्रसंगों में ही आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता था। मेरा निवेदन है कि इससे बहुत भ्रम उत्पन्न हो गया है।

इसके अतिरिक्त मसौदा-समिति ने "स्टेट" शब्द के साथ "दी" शब्द प्रयोग किया है। ऐसा प्रयोग प्रचलित नहीं है। इसके समर्थन में डॉ. अम्बेडकर केवल आस्ट्रेलिया का उदाहरण दे सके। जैसा कि श्री सिधवा बता चुके हैं, जब कभी वे कठिनाई में पड़ते हैं तो वे दक्षिणी अफ्रीका अथवा आस्ट्रेलिया का उदाहरण देते हैं। किन्तु जब उनसे प्रमाण के लिये आग्रह किया जाता है तो वे उसे नहीं प्रस्तुत करते। श्रीमान, मेरा निवेदन है कि इन शब्दों को एक साथ नहीं रखना चाहिये था। "स्टेट" शब्द को बिना "दी" शब्द के साथ रखे हुए ही परिभाषा में रखा जा सकता था। "दी" शब्द डेफनिट आर्टिकल अर्थात् निश्चयात्मक विशेषण है किन्तु इसे विभिन्न स्थलों में अनिश्चित अर्थ में प्रयोग किया गया है। हमने सर्वत्र "दी स्टेट" पदावलि प्रयोग की है जिससे अभिप्रेत है नगरपालिकाएं, जिला बोर्ड, स्थानीय बोर्ड, संघीय बोर्ड तथा इन्हीं के समान अन्य निकाय। यदि भारत में एक ही राज्य होता तो "दी स्टेट" पदावलि प्रयोग की जा सकती थी। अनिश्चित अर्थ में इसे प्रयोग नहीं किया जा सकता। "दी स्टेट" की जो परिभाषा की गई है उसके अन्तर्गत कई लाख राज्य आ जायेंगे जिनमें जिला बोर्ड, नगरपालिकाएं, स्थानीय बोर्ड तथा संघीय बोर्ड आदि भी सम्मिलित हैं। इसलिये यदि हमने विभिन्न स्थानों पर "दी स्टेट" पदावलि प्रयोग की है तो उससे वास्तव में कई लाख राज्य अभिप्रेत हैं। इस प्रसंग में "दी" शब्द नहीं प्रयोग किया जाना चाहिये। हमें प्रसंगानुसार कहना चाहिये "यह राज्य" अथवा "वह राज्य" अथवा "एक राज्य" अथवा "कोई राज्य" अथवा "प्रत्येक राज्य"। "दी" और "स्टेट" शब्दों को एक साथ रखने से मसौदाकार के लिये किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं रह जाती।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या आप कभी किसी विद्यालय में अध्यापक रहे हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इसके अतिरिक्त श्रीमान, "भारत डोमीनियन" पदावलि को बड़े प्रेम से बार-बार प्रयोग किया गया है। वास्तव में इस सम्बन्ध में उस चिड़िया का उदाहरण दिया जा सकता है जो बहुत काल तक पिंजड़े में रही हो। जब उसे छोड़ा जाता है तो वह फिर उसी पिंजड़े में वापस चली आती है। इसी प्रकार जो अपराधी जेल में रहने का अभ्यस्त हो गया हो वह मुक्त होने पर फिर अपराध करता है और फिर जेल चला जाता है। यद्यपि हम डोमीनियन के बन्धनों से मुक्त हो गये हैं किन्तु हम उन्हें फिर स्वीकार करना चाहते हैं। "भारत की संविधान सभा" जैसी सीधी-सादी पदावलि प्रयोग न करके मसौदा समिति ने बिना किसी आवश्यकता के "डोमीनियन की संविधान सभा" पदावलि प्रयोग की है। इसकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं है किन्तु डॉ. अम्बेडकर ने हमें बताया कि उनके लिये इसके अतिरिक्त और

कोई चारा नहीं था। इसका सीधा सादा उपाय था। वे केवल "भारत की संविधान सभा" कह सकते थे। इससे पूरा आशय प्रकट हो जाता। हमने इस पदावलि को इतना अधिक प्रयोग किया है कि इससे कोई अयुक्त बात पैदा नहीं होगी।

जैसा कि श्री सिधवा ने कहा है। यह किसी को विदित नहीं है कि इस सभा को कौन से विशेषाधिकार प्राप्त हैं। द्वितीय पठन के अवसर पर मैंने बताया था कि कामन्स सभा के सदस्यों के विशेषाधिकार किसी को विदित नहीं हैं और उनका उल्लेख यत्र तत्र इंग्लिस्तान के कई नियमों में तथा पाठ्य पुस्तकों में मिलता है। इन उल्लेखों को संकलित करना चाहिये था। इस काम को केवल कामन्स सभा के सदस्यों के विशेषाधिकारों का अस्पष्ट शब्दों में उल्लेख करके टाल न देना चाहिये था। विशेषाधिकारों की गणना करनी चाहिये थी और उन्हें संविधान में समाविष्ट करना चाहिये था। किन्तु इसके लिये मसौदा-समिति के पास न तो समय था और न इस ओर उसकी प्रवृत्ति ही थी।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि वे बिना किसी आवश्यकता के अन्यायपूर्ण ढंग से कम कर दिये गये हैं। कुछ मामलों में वर्तमान न्यायाधीशों के भी वेतनों को तुरन्त ही घटाने का प्रयास किया गया था। यह उस संविदा के विरुद्ध होता जिसके आधार पर वे नियुक्त किये गये थे। मेरे आपति करने पर यह रियायत की गई कि 31 अक्टूबर 1948 तक जो न्यायाधीश नियुक्त किये गये थे उन्हें पुराना ही वेतन देने का निश्चय किया गया था। बहुत आगा-पीछा करने के बाद इसे भी हटा दिया गया और अब न्यायाधीशों के वर्तमान वेतन को रहने दिया गया है।

मैं वादों अर्थात् ऐसे लघुवादों के स्थानान्तरण के सम्बन्ध में, जिनमें संविधान के निर्वचन का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो, एक अन्य अयुक्त बात की ओर ध्यान आकृष्ट करूंगा। मसौदा-समिति को ऐसे विधि प्रश्न से बहुत प्रेम रहा है जिसमें संविधान के निर्वचन का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त रहा है। जिलों में लघुवादों में यदि संविधान के निर्वचन का कोई प्रश्न अन्तर्गस्त होता तो इसका परिणाम यह होगा कि उच्च न्यायालय को इन वादों को वापस लेना होगा और उन्हें तुरन्त ही निबटाना होगा अथवा इस प्रकार के प्रश्न के सम्बन्ध में निर्णय करना होगा। मेरा निवेदन है कि वास्तव में संविधान के निर्वचन का प्रश्न तथ्यों पर निभर रहेगा। उच्च न्यायालय को बहुत से लघुवादों को निबटाना पड़ेगा और एक पुराना मुकदमेबाज यह आपत्ति करेगा कि संविधान के निर्वचन का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है—उस वाद को वापिस लेना होगा और मुकदमेबाज़ी में बहुत धन व्यय होगा। यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की मुकदमेबाजी में गरीबों को ही हानि उठानी पड़ेगी। इस प्रकार इससे जनसाधारण को हानि होगी और विधि का प्रशासन अधिक व्यय साध्य तथा काल-साध्य हो जायेगा।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, मैं देखता हूं कि संविधान में एक व्यक्ति का कोई भी कृत्य नहीं रखा गया है। वह अनुच्छेद 366 के खण्ड (30) में उल्लिखित उप राजप्रमुख है—उप-राजप्रमुख युक्लिड के बिन्दु के समान है, जिसका अस्तित्व तो होता है किन्तु परिमाण कुछ नहीं होता। उपराजप्रमुख को एक ओहदा दिया गया

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

है किन्तु कोई कह नहीं सकता है वह है क्या। उसे कोई कृत्य नहीं दिया गया है। संविधान में यह नहीं बताया गया है कि वह राज-प्रमुख के होते हुए भी कार्य करेगा अथवा वह केवल एक अतिरिक्त कार्यकर्ता होगा। मेरा निवेदन है कि जैसा कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने एक अन्य पद धारण करते हुए कहा था, इस संविधान का मसौदा इतना दोषपूर्ण है कि वकील इसे प्राप्त करके निहाल हो जायेंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मसौदा-समिति जैसी समुन्नत संस्था में समुन्नत स्थान प्राप्त करके उन्होंने अपनी राय बदल दी है।

मेरे विचार से अब मुझे समाप्त करना चाहिये। मसौदा-समिति की इस प्रकार आलोचना करने के लिये मैं सभा से क्षमा मांगता हूं। साथ ही मसौदा समिति ने इस कार्य को सम्पन्न करने में जो कष्ट उठाया है उसके लिये हमें उसे धन्यवाद भी देना है। यह स्वीकार करना होगा कि मसौदा-समिति ने अपनी पूरी शक्ति लगा कर कार्य किया है। उसने बहुत कठिन परिश्रम किया किन्तु किसी निश्चित योजना के आधार पर कार्य नहीं किया। वे अपनी योजनायें प्रतिदिन बदलते गये। इसी कारण इतनी अधिक अयुक्त बातें रह गई हैं। कई बार तो पदारूढ़ दल ने उसे विशेष प्रकार के निर्णय करने के लिये विवश किया।

इसके अतिरिक्त एक अन्य अयुक्त स्थिति भी है। भाग 6 में प्रान्तों के सम्बन्ध में उपबन्ध है। इसे राज्यों के सम्बन्ध में भी लागू करने के लिए भाग 7 रखा गया और उसमें अनुकूल करने के लिए कुछ वाक्य रखे गये। ये वाक्य बहुत अव्यवस्थित हैं और वास्तव में इन्हें भाग 6 में रखना चाहिये था। यह आसानी से कहा जा सकता था कि जहां कहीं "राज्यपाल" शब्द प्रयुक्त हैं वहां अथवा "राजप्रमुख" शब्द भी जोड़ दिये जायें। इसमें कोई कठिनाई नहीं थी। मैंने इस आशय के एक संशोधन की अर्थात् संशोधन संख्या 364 की सूचना दी थी। अपने विचार से मैंने उपयुक्त से उपयुक्त संशोधन उपस्थित किया था और मसौदा-समिति यदि चाहती तो उसमें कुछ रूप-भेद करके स्वीकार कर सकती थी इससे ये उपबन्ध सारवान तथा सुसम्बद्ध हो जाते। इसके अतिरिक्त प्रान्तों और राज्यों के सम्बन्ध में सभी उपबन्ध एक साथ रखे गये हैं। किन्तु मेरा विश्वास है कि मसौदा समिति थक गई थी क्योंकि उसने अत्यधिक कार्य किया था। यद्यपि इस सुधार की आवश्यकता थी किन्तु उसमें अधिक कार्य करने की सामर्थ्य नहीं रह गई थी। मेरा संशोधन बना बनाया था और उसे केवल एक बार दुहराने की आवश्यकता थी।

समय के अभाव के कारण मैंने थोड़ी सी बातें संक्षेप में कहीं हैं। अपना भाषण समाप्त करने के पूर्व में यह कहे बिना नहीं रह सकता कि श्रीमान, हम सभी तथा मैं स्वयं आपका हृदय से आभारी हूं। चाहे सभा में जो भी कार्य हुआ है आप उन सदस्यों के संरक्षक रहे हैं जिन्होंने इसे अपना कर्तव्य समझा कि वे मसौदा-समिति के विरुद्ध बोलें। आपने अपना कार्य इतनी बुद्धिमत्ता, उदारता तथा योग्यता से किया है कि यह सभा आपकी आभारी है। आप इस सभा की कार्यवाही की बड़ी सावधानी के साथ देखरेख करते रहे हैं। यह बात नहीं थी कि आप मसौदा समिति की अयुक्त बातों को नहीं समझते थे किन्तु यह आपका कर्तव्य नहीं था कि आप गुणदोषों का विचार करके हस्तक्षेप करते। जिन सदस्यों ने अपना

कर्तव्य समझ कर मसौदा-समिति के विरुद्ध इच्छा न होते हुए भी बोलना चाहा उन्हें आपने अधिक से अधिक स्वतन्त्रता प्रदान की।

श्रीमान, यद्यपि संविधान के मसौदा में ये दोष हैं और कई अन्य दोष भी हैं किन्तु उसे स्वीकार कर लेना चाहिये। आखिर अच्छे मसौदे का बहुत अधिक महत्व नहीं है। मसौदा दोषपूर्ण है और उसके फलस्वरूप बहुत से मामले उठ खड़े होंगे। जैसा कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने अन्यत्र कहा था, इसे पाकर वकील निहाल हो जायेंगे किन्तु मेरा विश्वास है कि संविधान का सफल होना या विफल होना इस पर निर्भर करता है कि यह किस भावना से प्रयोग में लाया जायेगा। यदि इसे अच्छी भावना से प्रवर्तन में लाया जायेगा तो यह दोषपूर्ण संविधान भी सुन्दर से सुन्दर परिणामों का स्रोत प्रमाणित होगा और जैसे जैसे समय बीतेगा भारत के लोग अधिकाधिक राजनैतिक तथा आर्थिक स्वातन्त्रय प्राप्त करेंगे।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान, तीन वर्ष तक कठिन परिश्रम करने के पश्चात्, चाहे इस संविधान को बनाने में मेरा योग कितना ही नगण्य क्यों न रहा हो, मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि हमने अपना कार्य सुन्दर ढंग से किया है। विभिन्न मत अवश्य ही होंगे क्योंकि यदि हममें से सभी लोगों का एक ही मत हुआ तो वह फासीवाद होगा अथवा निरंकुशता होगी और लोकतन्त्रवाद नहीं रहेगा। यह हो सकता है कि इस समय, या इसके पश्चात्, मतभेद हो किन्तु यह एक तथ्य है कि हमने एक संविधान का, एक लोकतंत्रात्मक संविधान का निर्माण किया है। आपके बुद्धिमत्तापूर्ण पथप्रदर्शन से जिस प्रकार यह नैया किनारे आ लगी है उसके लिये मैं आपके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूं। मैं मसौदा-समिति को भी धन्यवाद देता हूं। मेरा उससे कुछ अनुच्छेदों के सम्बन्ध में कितना ही मतभेद क्यों न रहा हो और अब भी कितना ही मतभेद क्यों न हो किन्तु मैं यह कहूंगा कि उन्होंने अपने कर्तव्यों का पालन योग्यता के साथ किया है।

श्रीमान, यद्यपि मसौदा-समिति ने संविधान को उसका वर्तमान स्वरूप प्रदान करने में अथक परिश्रम किया किन्तु मेरी हमेशा यह धारणा बनी रही कि यह एक दुख की बात है कि संविधान में कांग्रेस के आदर्शों का कोई प्रतिबिम्ब नहीं है। मैं इस समय इसका विश्लेषण करने नहीं जा रहा हूं कि कांग्रेस ने गैर कांग्रेसी लोगों का बहुमत कैसे प्राप्त कर लिया किन्तु मेरे हृदय में यह धारणा बनी रही, और मेरे विचार से यहां मेरे बहुत से साथी भी मेरे इस विचार से सहमत होंगे, कि यद्यपि यह संविधान कुछ काल तक हमारे अधिकार-पत्र के रूप में रहेगा किन्तु इसमें कांग्रेस के आदर्शों का अभाव है।

अधिक और कुछ कहने के पूर्व मैं आदरपूर्वक राष्ट्रपिता को प्रणाम करता हूं जिन्होंने भारतीय लोगों के स्वातन्त्र्य के लिये संघर्ष किया और जो हमें एक ऐसे स्तर पर लाये कि हम इस संविधान को बना सके। वे अब हमारे बीच में नहीं हैं किन्तु वे हमें देख रहे हैं। नम्रतापूर्वक मैं इस समय उनका स्मरण करता हूं। राष्ट्रमंडल से सम्बन्ध बनाये रखने पर भी, जो मुझे तथा कई अन्य लोगों को बिल्कुल नापसन्द है, हमने जो कुछ प्राप्त किया है वह सब राष्ट्रपिता की ही देन है।

[श्री बी. दास]

इस सभा के बाहर मैंने उन लोगों के आरोप सुने हैं जो अपने को समाजवादी कहते हैं। वे यह कहते हैं कि यह संविधान प्रभावशून्य हो जायेगा। मुझे स्मरण है कि कुछ महीने पूर्व समाजवादियों ने "एक ड्राफ्ट कंस्टिट्यूशन" नाम की एक किताब निकाली थी। यदि समाजवादी तथा उनके नेता श्रीयुत जयप्रकाश नारायण धृष्टता से यह कहते हैं कि संविधान प्रभावशून्य हो जायेगा तो मैं उन्हें तथा उनके नेता को और समाजवादी दल को चुनौती देता हूं। यदि वे कांग्रेस से स्वर्ग के साम्राज्य को, इस देश की सरकार को प्राप्त करना चाहते हैं तो...

***श्री एच.वी. कामतः** हम पार्थिव साम्राज्य चाहते हैं?

***श्री बी. दासः** मुझे क्षमा कीजिये, पार्थिव साम्राज्य, मैं इसे स्वीकार करता हूं। यदि वे हमसे अर्थात् कांग्रेस दल से, शासन की बागडोर लेना चाहते हैं तो उन्हें यथार्थवादी तथा व्यावहारिक होना चाहिये। उनका दल एक बहुत ही अल्पसंख्यक दल है। इस लिये उन्हें यह न कहना चाहिये कि यह संविधान रद्द कर दिया जायेगा। इसके स्थान पर वे क्या रखना चाहते हैं? मैं श्रीयुत जयप्रकाश नारायण जी का आदर करता हूं किन्तु इस सभा के मंच से मैं उनसे अनुरोध करता हूं कि वे व्यावहारिक हों। यदि उनका यह विचार है कि वे शासन-कार्य कांग्रेस सरकार से अच्छी तरह चला सकते हैं तो वे एक संविधान बनायें। हम देखेंगे कि इस संविधान में तथा जिस संविधान की वे कल्पना करते हैं उसमें कितना आधारभूत अन्तर है।

उन प्रश्नों को उठाने के पूर्व जिनके विषय में मैं बोलना चाहता हूं मैं संविधान सभा के सचिवालय को तथा उन सभी को धन्यवाद देता हूं जो इस समय यहां नहीं हैं किन्तु राज्य के कार्य के लिये बाहर गये हुए हैं। मुझे श्रीयुत बी.एन. राव का स्मरण होता है जिन्होंने, हमारे अवैतनिक परामर्शदाता के रूप में, हमें अपने ज्ञान तथा अनुभव के आधार पर बहुत उत्कृष्ट परामर्श दिया। कुछ अन्य लोग भी हैं जो वैदेशिक सेवा में लगे हुए हैं और बाहर हमारे दूतावासों आदि में हैं। उन सबको हम धन्यवाद देते हैं। मुझे आशा है कि मेरे सहकारी भी मुझसे इस सम्बन्ध में सहमत हैं कि हम उन्हें धन्यवाद दें क्योंकि उन्होंने यथोचित अवसर पर यथोचित परामर्श देकर इस सभा के सदस्यों को सेवा की है।

श्रीमान, क्या हमारा देश एक गणराज्य है अथवा क्या राष्ट्रमंडल के देशों के साथ सम्बन्ध स्थापित करके हम अब भी एक पाप के भागी हैं? प्रस्तावना में कहा गया है कि हमें आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक न्याय करना चाहिये। क्या सुलभ-मुद्रा प्रदेशों से सम्बन्ध बनाये रख कर हम आर्थिक न्याय कर सकते हैं? राष्ट्रमडल तथा एक बाहर के देश अर्थात् इंग्लिस्तान के अधीन रहने के कारण ही आज भारत का जन समुदाय महंगाई के कारण कष्ट झेल रहा है। हमारे आर्थिक संकट के लिये इंग्लिस्तान ही उत्तरदाई है। सात वर्ष महंगाई रहने पर इंग्लिस्तान में मूल्य केवल साठ प्रतिशत बढ़े हैं किन्तु हमारे गरीब देश में मूल्य 400 प्रतिशत तक बढ़ गये हैं। संयुक्त राज्य अमरीका में मूल्य केवल 220 प्रतिशत बढ़े हैं। यह विचार करने की बात है कि युद्धकाल में हम इंग्लिस्तान तथा अमरीका के मित्र थे। श्रीमान, मैं कभी भी इंग्लिस्तान अथवा अमरीका का मित्र नहीं रहा। मैं

एक दास रहा और मेरे गले में फंदा पड़ा रहा। मेरा शोषण किया गया और मेरा खून चूसा गया। भारत की सारी दौलत तथा उसके आर्थिक साधन इंग्लिस्तान के हाथ में चले गये। किन्तु फिर भी मि. चर्चिल ने, तथा पार्लियामेंट के लेबर पार्टी के सदस्यों ने इन निन्दनीय शब्दों को कहने की धृष्टता की है कि पिछले युद्ध में भारत की रक्षा पर जो धन व्यय हुआ था उसे भारत को चुकाना चाहिये। इंग्लिस्तान के राजनीतिज्ञ अब भी इस देश के प्रति द्रोह रखते हैं। मुझे इंग्लिस्तान से कोई प्रेम नहीं है। 26 जनवरी 1950 को जब भारतीय गणराज्य की घोषणा की जायेगी तो मैं यह घोषणा करूंगा कि हमने राष्ट्रमंडल से और विशेषतया इंग्लिस्तान से नाता तोड़ दिया है।

श्रीमान, मसौदा-समिति ने 395 अनुच्छेदों का एक संविधान बना कर हमें दिया है। संविधान तथा इतिहास की दृष्टि से यह एक महाभारत है। ब्रिटिश पार्लियामेंट ने जिस संविधान को बनाया था उसमें 321 धारायें थीं किन्तु हमने जो संविधान बनाया है उसमें 395 अनुच्छेद हैं। मसौदा-समिति को ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ा जो उसके वश में नहीं थी और इस लिये उसे संविधान के अनुच्छेदों को बढ़ाना पड़ा। सम्भवत: वैसी ही स्थिति उत्पन्न हो गई थी जैसी स्थिति में सिपाहियों में भगदड़ मच जाती है। इस लिये वह उपबन्धों को एक ओर कठोर बनाती गई तथा दूसरी ओर उन्हें विस्तृत करती गई ताकि प्रत्येक व्यक्ति संविधान को समझ सके। मैं यह कहूंगा कि उसने विधि के भाष्यकारों का कार्य सम्पन्न कर दिया है। 395 अनुच्छेदों को भाष्यकारों अथवा व्याख्याकारों की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

श्रीमान, इस संविधान में जिस संगठन की कल्पना की गई है उसके शिखर पर एक मंत्रिमंडल है जिसका संयुक्त रूप से उत्तरदायित्व है, यद्यपि राष्ट्रपति को सरकार का प्रधान होने के नाते कुछ आपात-सम्बन्धी शक्तियां प्रदान की गई हैं। श्रीमान, मैंने कभी भी इन आपात सम्बन्धी शक्तियों को पसन्द नहीं किया किन्तु इन्हें संविधान में स्थान दिया गया है: जिस प्रशासन-संगठन की व्यवस्था की गई है और जिसके द्वारा मंत्रिमंडल देश के जन-साधारण पर शासन करेगी उस पर नियंत्रण सरकार के तीन अंगों द्वारा रखा जायेगा। उच्चतम न्यायालय के रूप में निरपेक्ष न्यायपालिका न्याय-प्रशासन करेगी, महा-लेखापरीक्षक सार्वजनिक धन के व्यय की परीक्षा करेगा तथा उस पर देख रेख रखेगा और संघीय लोकसेवा आयोग सेवाओं के लिये पदाधिकारियों को चुनेगा और सरकार उसकी सिफारिशों को स्वीकार करेगी। गृह-मंत्री इसकी चिंता करेंगे कि यह आयोग जो कुछ परामर्श देगा उसे मंत्रणालय स्वीकार करेगा। पहले यह नहीं किया जाता था और स्वतंत्रता प्राप्ति के ढाई वर्ष पश्चात् तक भी यह नहीं किया गया।

श्रीमान, महालेखापरीक्षक को देश के वित्त को सुव्यवस्थित रखना चाहिये। उसे पदाधिकारियों को संसद की यथोचित स्वीकृति के बिना धन व्यय न करने देना चाहिये और अधिक धन भी व्यय न करने देना चाहिये। कोई भी संसद पदाधिकारियों को स्वीकृत धन-राशि से अधिक राशि व्यय करने की आज्ञा देने के लिये, अथवा उसे व्यर्थ में व्यय करने देने के लिये, सहमत नहीं होगी। विदेशी राज में यही होता आया है। चाहे हमारे पदाधिकारियों ने कितना ही हृदय परिवर्तन क्यों न कर लिया हो और चाहे वे एक लोकतंत्रात्मक शासन के अधीन कार्य कर रहे हों और

[श्री बी. दास]

अपनी नीतियां कांग्रेस सरकार तथा मंत्रिमंडल की नीतियों के अनुरूप बना रहे हों। किन्तु अब भी उनकी बड़ी पुरानी धारणा है और वे यह समझते हैं कि उनकी वित्त-सम्बन्धी अनियमित बातों पर लेखा-परीक्षक को आपत्ति नहीं करनी चाहिये। इन सब बातों को दूर करना होगा।

श्रीमान, इस राष्ट्र को जिस आर्थिक संकट का सामना करना पड़ रहा है उसे मंत्रिमंडल को प्रशासन के प्रभुत्वों तथा जनसाधारण तथा इस सभा की सहायता से दूर करना चाहिये। किन्तु जब हमारा मंत्रिमंडल बीस अथवा इक्कीस मंत्रियों का है तो आर्थिक आत्म-निर्भरता कैसे सम्भव हो सकती है? इस स्थिति में कोई भी व्यक्ति कटौती की अथवा व्यय में कमी की आशा नहीं कर सकता। मंत्रालय अधिक धन व्यय करेंगे ही। यदि उनकी संख्या में कमी की जाये तो कुछ बचत हो सकती है। अंग्रेजी शासकों ने सात सचिवों की सहायता से भारत पर शासन किया था। आज हमारे यहां उन्नीस सचिव हैं। इस स्थिति में ऊपर से कटौती करने की आवश्यकता है। हमारा मंत्रिमंडल अनिवार्य रूप से बचत करके, मंत्रिमंडल के मंत्रियों के वेतनों को अनिवार्य रूप से घटा कर तथा हमें अपने दैनिक भत्तों के रूप में कम धन-राशि लेने के लिये राजी करके वर्तमान आर्थिक संकट को दूर करने का प्रयास कर रहा है। किन्तु जब तक हम ऐसी सरकार स्थापित नहीं करेंगे जो हमारी राष्ट्रीय व्यवस्था तथा देशवासियों के स्वभाव के अनुरूप न होगी तब तक हम अपनी आर्थिक समस्या को हल नहीं कर सकते हैं। हम अंग्रेजों की पुरानी शासन-प्रणाली को स्वीकार करके अपना शासन चला रहे हैं और भूतपूर्व अंग्रेज़ पदाधिकारी अब हमारे विश्वास-पात्र परामर्शदाता हैं। मुझे आशा है, और मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि 26 जनवरी, 1950 से भारत में देशी ढंग के प्रशासन को स्थापित करने की भावना प्रबल हो उठेगी।

श्रीमान, मैं दो शब्द वयस्क मताधिकार के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं। यह लोकतन्त्र का एक सुन्दर सिद्धान्त है। किन्तु यह एक पश्चिमी विचार है। हमने इसे पाश्चात्य लोगों से लिया है। मैंने इसे स्वीकार किया है किन्तु मैं कह नहीं सकता कि इसे व्यवहार में लाया जा सकता है या नहीं और हमारे मंत्री वयस्क मताधिकार की प्रणाली के अधीन जनवरी, 1951 तक निर्वाचन कर भी सकेंगे या नहीं। बाहर से लिये हुए विचार भारत की भूमि में नहीं पनपते। इस लिये सम्भवत: पांच या दस वर्ष के पश्चात् जब हम यह देखेंगे कि भारत में वयस्क मताधिकार को व्यवहार में लाना सम्भव नहीं है तो हो सकता है कि हमें अपनी विचारधारा बदलनी पड़े।

श्रीमान, इस अवसर पर मैं आंध्र प्रदेश के अपने मित्रों को आंध्र प्रान्त के चित्र को अन्तिम रूप देने के लिये बधाई देता हूं। वे लोग मेरे पड़ोसी हैं और कई वर्षों तक मेरा उस प्रान्त से निकट सम्पर्क रहा है। मेरी यह इच्छा थी कि इस संविधान द्वारा सरकार को इस प्रान्त को 26 जनवरी 1950 को स्थापित करने की शक्ति दी जाती किन्तु मैं समझता हूं कि इसमें कुछ समय लगेगा।

जब मैं संविधान को उठाकर उसके उपबन्धों को देखता हूं तो मैं उनमें से कुछ को पसंद नहीं कर पाता। निरोध-विषयक अनुच्छेद 22 मुझे नापसन्द है। सैनिक-विधि-विषयक अनुच्छेद 34 को भी मैं पसन्द नहीं करता और न अनुच्छेद 128 को ही पसन्द करता हूं जिस के अधीन, जैसा कि मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर ने कल कहा था, उच्च-न्यायालय के न्यायाधीशों को प्रशासन की सुविधा के लिये देश के एक भाग से किसी भी दूसरे भाग को भेजा जा सकता है। आज प्रातः यह बताया जा चुका है कि सामान्य असैनिक प्रशासन से न्यायपालिका के पृथक्करण की इस समय आवश्यकता नहीं है। विदेशियों के शासन काल में जिस की बहुत शिकायत की जाती थी और जिस सम्बन्ध में बहुत मतभेद था उसके सम्बन्ध में आज कोई आपत्ति नहीं है। यदि सभी पदाधिकारी ईमानदार हों तो न्यायपालिका को सामान्य प्रशासन से पृथक करने की आवश्यकता ही नहीं पड़े क्योंकि वास्तव में ऐसा करने से प्रत्येक प्रान्त का प्रशासन व्यय बढ़ जायेगा। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि मेरे माननीय मित्र श्री बारदोलोइ आज उपस्थित हैं। आसाम को एक बहुत बड़े आर्थिक संकट का सामना करना पड़ रहा है। इस संविधान के अधीन यदि आज हमें आर्थिक संकट का सामना करना पड़ रहा है तो कल किसी अन्य बड़े संकट का सामना करना पड़ेगा। इसलिये कुछ मामलों में हमें तेज़ी से आगे बढ़कर सावधानी से धीरे-धीरे कदम उठाना चाहिये।

जहां तक संघ लोक सेवा आयोग-विषयक अनुच्छेद 322 का सम्बन्ध है। किसी सचिव अथवा उपसचिव को आयोग के परामर्श की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये थी।

अनुच्छेद 148 के सम्बन्ध में हमने एक प्रकार का समझौता किया था। चाहे जो भी कठिनाइयां हों और सरकार की चाहे जो भी इच्छा हो। व्यय के नियंत्रण की परीक्षा के सम्बन्ध में महा-लेखापरीक्षक को सर्वोच्च प्राधिकार प्राप्त होना चाहिये। यदि उसे यह प्राधिकार नहीं दिया गया तो सब कुछ अव्यवस्थित हो जायेगा जैसा कि हम 1938-39 से अब तक देखते आये हैं।

मैं यह कह कर समाप्त करना चाहता हूं कि इस संविधान में जो बातें रह गई हैं उन्हें इस महीने की 25 अथवा 26 तारीख से पहले उसमें समाविष्ट कर लेना चाहिये। राष्ट्र-गान के सम्बन्ध में हमें निर्णय कर लेना चाहिये और मेरा यह भी निवेदन है कि हमें राष्ट्रीय पोशाक भी निश्चित कर देनी चाहिये। टाई कालर लगाये हुए पदाधिकारियों को इधर-उधर जाते देख कर मुझे घृणा होती है। केवल इस कारण कि हमारा राष्ट्रमंडल से सम्बन्ध बना हुआ है किसी को विदेशी पोशाक पहनने का अधिकार नहीं मिल जाता। उन्हें विदेशी पोषाक नहीं पहनने देनी चाहिये। संसद को विधि द्वारा उसका प्रतिषेध करना चाहिये। राज्य की सेवा में जो व्यक्ति लगा हुआ है उसे विदेशी पोशाक नहीं पहननी चाहिये।

केन्द्र और प्रान्तों के बीच वित्त के बंटवारे के सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर ने इस सभा में दो बार कहा था कि आयकर के बंटवारे के सम्बन्ध में एक तदर्थ समिति के नियुक्त किये जाने की घोषणा की जायेगी। श्रीमान मुझे आशा है कि आयकर के बंटवारे के सम्बन्ध में इस समिति को नियुक्त करने के लिये आप

[श्री बी. दास]

भारत सरकार पर जोर डालेंगे क्योंकि इससे न केवल मेरे मित्र श्री बारदोलोइ के प्रान्त आसाम को सहायता मिलेगी बल्कि कुछ सहायता उड़ीसा को भी प्राप्त होगी। श्रीमान, मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

अध्यक्ष: अब सभा कल प्रात: दस बजे तक के लिये स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा शुक्रवार तारीख 18 नवम्बर, 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS-252 PSD–17-12-52–320